चन्दामामा
अगस्त १९६७
75
P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS-26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

अगस्त १९६७

★

विषय - सूची

★

एक प्रति ०-७५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ८-४० पैसे

ऊँचे दर्जे की

अगरबत्तियाँ

पद्मा परफ्युमरि वर्क्स, मामुलपेट,

बेंगलोर - २.

A GREAT NAME IN HANDLOOMS

BEDSPREADS
FURNISHINGS
& TOWELS

MFG: AMARJOTHI FABRICS
POST BOX NO 22 KARUR.

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
झूट बोलना बुरा है, सच बोलना अच्छा है। ये उत्तम आदर्श हैं।
हो सकता है कि कभी कभी झूट बोलने से थोड़ा बहुत लाभ होता हो, जैसा कि "झूटी बहिन" कहानी में, पर अधिक हानि ही होती है, जैसे कि "छोटा-सा झूट" कहानी में। लाभ होता हो या हानि, झूट बोलनेवाले को कभी मानसिक शान्ति नहीं होती।
वर्ष: १८ अगस्त १९६७ अंक: १२
CHITRA

भारत का इतिहास

परिस्थिति कुछ ऐसी थी कि अगर डूप्ले की चाल चल जाती, तो अंग्रेजों को मद्रास छोड़ देना पड़ता। इस परिस्थिति में सान्डर्स ने अंग्रेजों की मदद की। यह सान्डर्स नया गवर्नर बनकर आया था और १७५० सेप्टेम्बर में इसने पद स्वीकार किया था, सान्डर्स की सलाह पर अंग्रेज सेनायें, फ्रेन्च सेनाओं के साथ युद्ध करने के लिए तैयार हो गईं। अंग्रेजों के कहने पर महम्मद अलि डूप्ले को बहुत दिन टरकाता रहा। इस बीच अंग्रज सेना को मैसूर, तन्जाऊर राजाओं की मदद और महाराष्ट्र के नायक मुरारी राव की भी मदद मिली।

अंग्रेजों की विजय के पीछे रोबर्टक्लाइव का भी हाथ था। वह ब्रिटिश कम्पनी में सिविल कर्मचारी के रूप में आया था। क्लाइव ने २०० अंग्रेज सैनिकों और ३०० सिपाहियों को लेकर, आरकाट पर आक्रमण किया।

आरकाट के वश में आने के बाद अंग्रेजो की प्रतिष्ठा और उनके युद्धतन्त्र की प्रसिद्धि बढ़ी। फ्रेन्च घबराये। उनका सरदार श्रीरंग द्वीप में जा छुपा। क्लाइव की सलाह पर अंग्रेजों ने उस द्वीप को घेर लिया, उसे जून १७५२ को वश में कर लिया और फ्रेन्चों के सरदार और सैनिकों को कैद कर लिया। चन्दा साहब भी हरा दिया गया। उसके मार दिये जाने के बाद फ्रेन्च की पराजय पूरी हो गई।

फिर भी डूप्ले ने अपने राजनैतिक दाँव पेतरें न छोड़े, उसने तिरुचनापली के किले को घेरने का प्रयत्न नहीं छोड़ा। उसकी चालें कुछ कुछ सफल हो रही थीं कि

फ्रेन्च सरकार ने उसको वापिस बुला लिया, युद्धों में पराजय और उन पर खर्च किया गया धन देखकर वे खिझ उठे थे। फ्रान्स से एक दूत आया और उसने अंग्रेज़ों से एक प्रकार की सन्धि भी कर ली।

इस सन्धि के फलस्वरूप जो कुछ सफलता डूप्ले ने प्राप्त की थी, वह भी जाती रही। यह यूरूप में "सात साल के युद्ध" के प्रारम्भ होने के कारण रद्द भी हो गई। उस युद्ध में फ्रान्स और ब्रिटेन एक दूसरे के विरोधी थे। इसलिए भारत में भी उन्हें युद्ध में उतरना पड़ा।

उस युद्ध में फ्रान्स जिस तरह कर्नाटक खो बैठा था, उसी तरह बन्गाल भी खो बैठा। तब बंगाल सूबेदार के नीचे था। सूबेदार होने को तो दिल्ली के बादशाह के नीचे था, पर वस्तुतः वह एक स्वतन्त्र राजा की तरह था। बंगाल के नवाब अलीवर्दीखान के ९ अप्रैल १७५६ को मर जाने के बाद उसकी सब से छोटी लड़की की लड़का सिराजुद्दौला बंगाल का नवाब बना। अलीवर्दीखान जब अस्वस्थ था और सिराजुद्दौला उसकी तरफ़ से शासन कर रहा था, तब ही उसके और अंग्रेज़ों के सम्बन्ध अच्छे न थे। क्योंकि कलकत्ता नगर को फ्रेन्चों के आक्रमणों से बचाने के लिए अंग्रेज़ों ने नगर रक्षण के लिए कुछ अतिरिक्त व्यवस्था की। जो कुछ उसने कर्नाटक के बारे में सुना था, उसको ध्यान में रखते हुए सिराजुद्दौला को यह बिल्कुल पसन्द न था। अंग्रेज़ों ने नवाब की अनुमति की बात तो दूर, उसे सूचना दिये बगैर किले की दीवारें बनाई और उन पर तोपों का इन्तज़ाम भी कर दिया।

सच कहा जाये तो अंग्रेज़ों ने न सोचा था कि सिराजुद्दौला नवाब बनेगा, (उसके

शत्रु पक्ष से सम्बन्धित दिवान राजवल्लभ नवाब होगा, यह उनका विश्वास था) इसलिए वे उससे दोस्ती कर रहे थे। यह राजवल्लभ अलीवर्दी की बड़ी लड़की, घुसिती बेगम का दिवान था।

सिराजुद्दौला ने गद्दी पर आते ही, अंग्रेज़ों को हुक्म दिया कि किले आदि की दीवारें या जो और व्यवस्था की गई थी, उसे भंग कर दिया जाये। उसने कासिम बाजार के अंग्रेज़ों की फैक्टरी के अधिपति वाटस को खबर भिजवाई—"तुम व्यापारी हो और जब तक व्यापार करते रहोगे, हमें तुम से कुछ नहीं कहना है।"

उसने अंग्रेज़ गवर्नर ड्रेक के पास भी खबर भिजवाई कि राजवल्लभ के कुटुम्ब को उसे सौंप दिया जाय। तब राजवल्लभ का परिवार कलकत्ता के अंग्रेज़ों के आश्रय में था। पर अंग्रेज़ों ने उसकी बातों की परवाह न की।

सिराजुद्दौला ने खूब चतुरता दिखाई। ४ जून को उसने कासीम बाजार की फैक्टरी को अपने आधीन कर लिया, फिर वह वहाँ से १६ तारीख को कलकत्ता पहुँचा। गवर्नर ड्रेक, सेनापति और और मुख्य अंग्रेज़ किला छोड़कर चले गये। और अपनी नौकाओं में जा छुपे। २० वीं तारीख को फोर्ट विलियम सिराजुद्दौला के आधीन हो गया।

(सिराजुद्दौला यदि अन्त तक यह चुस्ती दिखाता तो न मालूम भारत का इतिहास क्या होता? परन्तु बाद में मानों उसको शाप लगा हो, वह बहुत-सी गलतियाँ कर बैठा। इन गल्तियों का अंग्रेज़ों ने फायदा उठाया।)

छोटा-सा झूट

वल्भी नगर में कुमारदत्त नाम का एक सम्पन्न व्यापारी था, उसने धनदत्त नाम के व्यापारी के लड़की, श्रीमती से विवाह किया। जब उससे उसकी कोई सन्तान न हुई, तो उसने एक गाँव की लड़की को खरीदकर उपपत्नी बना लिया। उसका नाम पुष्पा था। वह दोनों पत्नियों से गृहस्थी निभाता रहा। पिता के बाद वह स्वयं व्यापार करने लगा।

न माल्स क्यों व्यापार में कुमारदत्त को कोई लाभ नहीं हुआ। मूल धन तो गया ही। ऊपर से काफ़ी कर्ज़ भी हो गया, कर्ज़ चुकाने के लिए उसको अपनी बहुत-सी ज़मीन जायदाद बेचनी पड़ी। जो कुछ बचा, उससे कुमारदत्त ने एक जगह, एक छोटा-सा मकान खरीद लिया। बड़े कष्ट से वह गृहस्थी चला रहा था।

धनदत्त के घर कोई शुभ कार्य आया। वहाँ से एक आदमी आया, कुमारदत्त और श्रीमती को निमन्त्रित करके ले गया। पुष्पा घर में ही रह गई।

बातों बातों में धनदत्त ने, दामाद की गरीबी के बारे में माल्स कर लिया। "खाली बैठने से क्या होगा? मैं तुम्हें हज़ार मूहरें देता हूँ। उनसे फिर कोई छोटा मोटा व्यापार शुरु करो। अगर वह ठीक चल पड़ा, तो थोड़ा और पैसा दूँगा।"

कुमारदत्त को बड़ी खुशी हुई, उसने श्रीमती को कुछ दिन उसके माइके ही छोड़ दिया और व्यापार के चल पड़ने के बाद, उसे ले जाने की ठानी। वह

रामधन

"तुम्हें एक दोस्त के पास गिरवी रखकर लाया हूँ और भला मैं कैसे मुहरें लाता? वह दोस्त कल आकर तुम्हें ले जायेगा।" कुमारदत्त ने यूँ छोटा-सा झूट बोला।

"तो क्या मैं अब इस घर में नहीं रहूँगी?" पुष्पा ने घबराकर पूछा।

"जब कभी मेरे हाथ में पैसा आयेगा, तो उसे देकर, तुम्हें छुड़ा लाऊँगा। अगर नहीं आयेगा, तो तुम उसी की हो जाओगी।" कहकर कुमारदत्त सो गया।

पुष्पा गाँव की थी। नादान थी। उसे डर लग रहा था, न मालूम कैसा आदमी आये, न मालूम वह कैसे घर में उसे ले जाये। वह तब तक इसी ख्याल में थी कि कुमारदत्त उसका पति था और उसका वह घर था, अब पति की बात सुनकर वह पगला-सी गई।

"देखें मेरे माँ बाप क्या कहते हैं, वे जो करने के लिए कहेंगे वह करूँगी।" यह सोचकर पुष्पा चुपचाप बाहर चली आयी, दरवाजे बन्द कर दिये।

आधी रात के समय नगर निर्जन-सा था। निश्शब्द था। गली में थोड़ी दूर

ससुर द्वारा दिये गये हज़ार मुहरों का पोटली लेकर अपने दोस्त के यहाँ गया।

भोजन कर कराकर कुमारदत्त जब अपने घर गया, तो आधी रात हो चुकी थी। पुष्पा गाढ़ी नीन्द में थी। बहुत देर किवाड़ खटखटाने के बाद वह उठी। जब आखिर उसने दरवाजा खोला, तो कुमारदत्त ने मुहरों की पोटली को खाट पर डालते हुए कहा—"अरे, इतनी नीन्द भी क्या थी?"

"इतना धन कहाँ से लाये हो?" पुष्पा ने आश्चर्य में पूछा।

जाने के बाद, उसे आगे बढ़ने में डर लगा। उसे लगा कि बिना सवेरा हुए वह अपने माँ बाप के घर का रास्ता न जान सकेगी। वह एक जान पहिचानवाले के घर चली गई। उनके घर के किवाड़ खटखटाये। उन्होंने दरवाजा खोलकर पूछा—"यह क्या पुष्पा? इस समय आयी हो।"

"हाँ....मेरे पति ने बिना किसी कारण मुझे कहीं किसी के यहाँ गिरवी रखा है। मैं अपने माँ बाप के यहाँ जाकर, यह मालूम करना चाहती हूँ कि वे क्या कहते हैं। मैं उनको बिना बताये निकल पड़ी हूँ। सवेरा होने पर उनको बता देना कि मैं अपने माइके चली गई हूँ और सवेरे तक मैं यहीं पड़ी रहूँगी।" पुष्पा ने कहा।

घरवाले इसके लिए मान गये। उसे सवेरे तक उचटी उचटी नीन्द आती रही। फिर वह उठकर अपने माँ बाप के गाँव की ओर चल पड़ी। जब सूरज कुछ ऊपर उठा, तो वह नगर से एक मील दूर जा चुकी थी। पर वह खूब थक गई थी, वह रास्ते के पास गिर पड़ी।

कुछ देर बाद, एक युवक आया, वह भी बलभी नगर से आ रहा था। पिछले दिन वह आया था। वहाँ अपना माल बेचकर अपने गाँव जा रहा था। उसका गाँव भी, पुष्पा के माँ बाप के गाँव के पास था। इसलिए दोनों मिलकर चलने लगे।

पुष्पा का अपने घर के किवाड़ बन्दकर गली में कुछ दूर जाना, फिर किसी एक और घर में उसका घुसना, एक चोर ने देख लिया था। वह कुछ देर देखता रहा कि कहीं वह वापिस तो नहीं आती है। फिर वह कुमारदत्त के घर में घुस गया।

अन्दर दीया जल रहा था। सोने के कमरे में एक आदमी सो रहा था, खाट पर मुहरों की पोटली पड़ी थी।

चोर ने उस पोटली को उठा ले जाना चाहा। इतने में कुमारदत्त उठा। "कौन हो तुम?" उसने चोर को पकड़ लिया। चोर ने उसका हाथ छुड़ाकर, एक और कमरे में भागना चाहा। कुमारदत्त ने उसका पीछा करके, उसे फिर पकड़ लिया। चोर को उस कमरे में एक खुण्डी छुरी दिखाई दी। तुरत उसने उससे कुमारदत्त के सिर पर चोट की। फिर वह भाग निकला। कुमारदत्त तभी ठंडा हो गया।

सवेरा हुआ। जब वे घरवाले पुष्पा के बारे में कहने के लिए कुमारदत्त के घर गये, तो उन्होंने उसकी लाश देखी, कर्मचारियों को मालूम हो गया कि कोई कुमारदत्त की हत्या कर, मुहरों की पोटली लेकर चम्पत हो गया था। पुष्पा पर सन्देह किया गया। सिपाही, जिस रास्ते पुष्पा गई थी, उस रास्ते गई। उसे और उसके साथ जानेवाले युवक को उन्होंने पकड़ लिया। उसके पास भी एक हज़ार मुहरें थीं। न्यायाधिकारी को भी विश्वास हो गया कि पुष्पा और उस युवक ने मिलकर, कुमारदत्त की हत्या कर दी थी, उसने उनको मौत की सज़ा दी।

जब उनको फाँसी दी जा रही थी, तो असली चोर सामने आया। उसने कहा कि वह ही हत्यारा था और उसने आत्मरक्षा के लिए उसकी हत्या की थी। पुष्पा का बयान और चोर का बयान दोनों ही एक थे। दो के प्राणों की रक्षा करने के कारण, न्यायाधिकारी ने चोर को माफ़ कर दिया।

पाताल दुर्ग

[१५]

[बौने राक्षस की मदद के कारण धूमक और उसके साथी, खड्ड से गुप्त सुरंग में जा पहुँचे। रास्ते में उनको कुछ राक्षस सेवक दिखाई दिये। उनसे बच बचाकर, ज्योंहि वे सुरंग के द्वार के पास पहुँचे, तो उन्हें हाथी जुते रथ में एक बड़ा राक्षस जाता हुआ दिखाई दिया। बाद में—]

हाथियों के रथ के जाते ही, धूमक ने अपने दोनों साथियों की ओर देखा। वह यह जानना चाहता था कि वे डर रहे थे, या अचरज कर रहे थे। जैसे भी हो, वे महाकलि राक्षस के दण्डकारण्य में पहुँच गये थे। सचमुच, कष्ट तो अभी शुरु हुए थे।

सोमक ने बाण जोर से पकड़ लिए। जिस रास्ते राक्षस गया था, उसी ओर वह देख रहा था। विरूप भाले को रगड़ रहा था। उनमें भय कहीं न था। दोनों दान्त समेटकर, लम्बी लम्बी साँसें ले रहे थे।

"उस रथ में महाकलि पाताल दुर्ग का ही राजा गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।" धूमक ने कहा।

"मैं भी यही सोच रहा हूँ। अगर तुम ईशारा ही कर देते, तो मैं एक बाण

अगर वह उनके साथ होता, तो महाकलि को देखते ही, वह पूछता....बताओ, तुमने मेरी पत्नी को कहाँ छुपा रखा है?" वह भाला लेकर उसकी ओर लपकता?

"इस सुरंग से यदि हम दुश्मनों की नजर से निकल पड़े, तो इस जंगल में हमें कोई नहीं पकड़ सकता? सुरन्ग के द्वार पर कोई पहरा दे रहा है। उनकी इधर उधर चलने की ध्वनि तुमको नहीं सुनाई दे रही है?" धूमक ने पूछा।

विरूप और सोमक थोड़ी देर बिना कुछ कहे सुनते रहे। "एक से अधिक ही यहाँ पहरे पर हैं। उनकी बातचीत भी यहाँ कुछ कुछ सुनाई पड़ती है।"

"पहिले इन पहरेदारों के बारे में मालूम कर लेना अच्छा है। अगर हमने यहाँ कुछ किया कराया, तो कुछ और राक्षस सुरंग में आ सकते हैं। नहीं तो जो अभी अभी गये हैं वे वापिस आ सकते हैं।" कहता धूमक पत्थरों के पीछे रेंगता गया और सुरन्ग के द्वार के चारों ओर देखने लगा। द्वार के एक ओर एक पेड़ के नीचे एक राक्षस और चार मनुष्य बैठे थे। वे पाचों

की चोट से उसे रथ से गिरा देता।" सोमक ने कहा।

"यह खतरनाक है। अगर वह मर जाता, तो उसके रथ के पीछे जानेवाले हथियारबन्द लोग हमारी ओर लपकते। इस दुष्ट की हत्या करने के लिए इससे अधिक सरल तरीका धूमकबाबू को सोचना पड़ेगा।" विरूप ने कहा।

विरूप की दूर दृष्टि और संकेत का ज्ञान देखकर धूमक को बड़ी खुशी हुई। धूमक ने सोचा, कि पुलिन्द का उनके साथ न होना, हर तरह से अच्छा था।

किसी बात पर बहस कर रहे थे। कभी कभी उनमें से एक उठकर कुछ दूर जाता और तलवार घुमाता।

धूमक उनको देखकर कुछ घबराया। शत्रुओं की आँखों में धूल झोंककर सुरंग से जंगल में बाहर जा निकलना उसको असम्भव-सा लगा। अब क्या किया जाय? धूमक इसी उधेड़बुन में, अपने साथियों की ओर आना ही चाहता था कि दूर किसी के शंख के जोर से बजाने की ध्वनि हुई। उसे सुनते ही, चारों पहरेदार, पेड़ के नीचे से चले गये और जो तलवार चला रहा था, वह तलवार छोड़ सुरंग के द्वार की ओर आने लगा।

धूमक जल्दी जल्दी अपने साथियों के पास आया। जो कुछ उसने देखा था, वह जल्दी जल्दी बताकर उसने कहा—"ये दुष्ट या तो दुपहर के भोजन के लिए, नहीं तो शाम के भोजन के लिए जाते लगते हैं। यह शंख शायद इसलिए ही बजाया जा रहा है। उनमें से एक इस तरफ़ आ रहा है।"

इतने में राक्षस सेवक सुरंग के द्वार के पास आया। उसने सन्देह की दृष्टि से अन्दर झाँककर देखा—"कुछ फुस फुस सुनाई दे रही है, कौन है यहाँ? राक्षस बाबू....? या मनुष्य कीड़े?" उसने पूछा।
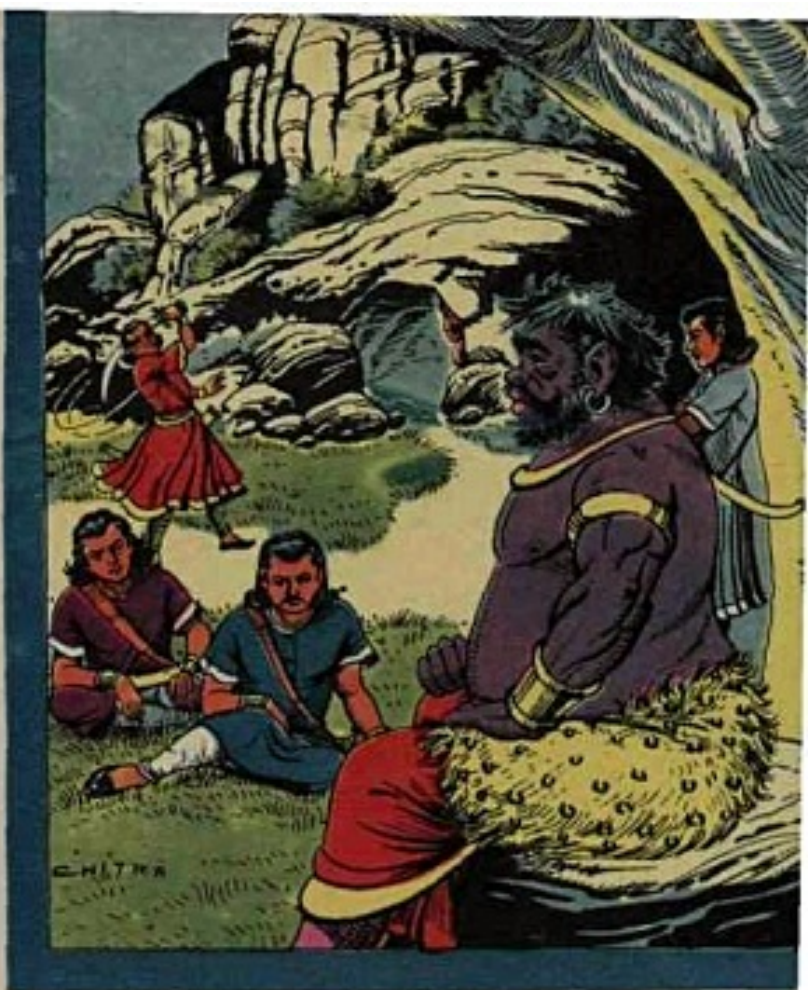
धूमक ने अपने मित्रों को उसके सुरंग में घुसते ही, उसे घेरने के लिए कहा और पत्थर के पीछे से वह धीमे से खाँसा। खाँसना सुनकर, सेवक ने कहा—"अरे कौन है, मुझ से मजाक कर रहे हो?" वह तलवार घुमाता सुरंग में कूदा। तुरत तीनों पत्थरों के पीछे से उठे और उसे घेरकर उन्होंने कहा—"तलवार

छोड़ दो, तुम्हारी जान को कोई खतरा नहीं है।"

"कौन ? तुम नीचों के सामने मैं हथियार डाल दूँ ? तुम यहाँ आये कैसे ? पहिले हथियार छोड़कर सामने आओ। जानते हो मैं कौन हूँ ? इस दण्डकारण्य में मुझ से अच्छा तलवार चलानेवाला कोई नहीं है !" राक्षस सेवक ने कहा।

वह अभी कह ही रहा था कि धूमक ने तलवार की मूठ से, सेवक के सिर पर जोर से मारा। चोट लगते ही, वह धीमे से चिल्लाया और नीचे गिर गया। धूमक ने अपने साथियों को उसे उठाने के लिए कहा—"इसे जीते जी अपने साथ जंगल में ले जाना अच्छा है। इससे महाकलि के पाताल दुर्ग के बारे में बहुत-से भेद जाने जा सकते हैं।"

सोमक और विरूप ने मिलकर राक्षस सेवक को उठाया और उसे कन्धे पर डाल वे निकल पड़े। धूमक पहिले सुरंग का द्वार पार करके बाहर आया। वहाँ कोई शत्रु न था, परन्तु पेड़ों की झुरमुट तक पहुँचने के लिए ज़रूरी था कि चार सौ पाँच सौ गज का मैदान पार किया जाये।

"जल्दी दौड़ो, जब तक हम जंगल में नहीं पहुँच जाते, तब तक हम खतरे से बाहर नहीं है।" धूमक ने अपने साथियों को खबरदार किया। जब वे भागने लगे, तो वह राक्षस सेवक जो तब तक बेहोश-सा था, हिलने लगा। उसकी बेहोशी जाती रही। वह चिल्लाने लगा—"शत्रु शत्रु, पकड़ो पकड़ो।"

"समय व्यर्थ करना खतरनाक है। उसे सुरंग में डालकर मेरे साथ भागकर आओ...." धूमक ने आज्ञा दी। तुरत

विरूप और सोमक ने कहा—"जा मर" और उस राक्षस को सुरंग में फेंककर, धूमक के साथ वे भागने लगे।

वे तीनों मैदान पार करके पेड़ों के झुरमुट में पहुँचे। उन्हें किसी राक्षस पहरेदार ने शायद नहीं देखा था। सारा जंगल बिल्कुल शान्त था, सूर्य पश्चिम में काफ़ी चला गया था, जंगल में चुपचाप रहते, उनको महाकलि राक्षस के पाताल दुर्ग के बारे में जानना था, जब तक कोई राक्षस सेवक नहीं बताता, तब तक कुछ जानना सम्भव न था, धूमक ने सोचा।

धूमक बिना यह सोचे कि वह किस ओर जा रहा था, जंगल में काफ़ी दूर चला गया। पीछे आते हुए साथियों से उसने कहा—"आज रात हम जंगल में जो कुछ फल वल मिलेंगे, उनसे ही अपना पेट भर लेंगे। सामने के पहाड़ों में कोई गुफ़ा देखकर, उसमें अपने रहने का ठिकाना कर लेंगे।"

सोमक ने हाँ जताते हुए अपना सिर हिलाया। विरूप ने चारों ओर एक बार देखकर कहा—"इतना भयंकर जंगल मैंने कहीं नहीं देखा है। मैंने पहिले ही बताया था कि इस जंगल में कहीं कालशम्बर नाम का मान्त्रिक है। उससे मिल सका....तो.... ?

विरूप ने अभी अपनी बात पूरी न की थी कि धूमक के पास का मन्त्रदण्ड किच किच करता हिला, वह सामने के पहाड़ों की ओर उसे खींचने लगा। धूमक ने बड़े उत्साह से कहा—"इतने दिन हम इसकी बात ही भूल गये थे। मान्त्रिक महाकलि के सेवकों को नहीं मिला है और यहीं कहीं है, यह मेरा विश्वास और भी पक्का होता जा रहा है। शायद वह

सामने के पहाड़ों में हो।" कुछ क्षण उन पहाड़ों की ओर देखकर उसने कहा— "अन्धेरा होने से पहिले, हमारे लिए वहाँ पहुँचना अच्छा है। तुम पेड़ों पर चढ़कर देखो कहीं आस पास कोई राक्षस सेवक तो नहीं है....।"

सोमक और विरूप वहाँ के ऊँचे पेड़ों पर जल्दी जल्दी चढ़े। चार पाँच मिनट तक वे चारों ओर देखते रहे। फिर यकायक पेड़ों से उतरकर आये। पहिले विरूप ने धूमक के पास जाकर कहा धूमक बाबू! मुझे अपनी ही आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा है। सच मानो। राक्षस और उनके सेवक जंगल में जहाँ तहाँ पेड़ काटकर, खेती कर रहे हैं। भूमि पर हल चलाने के लिए और गाड़ी खींचने के लिए, जानते हो, वे किन जानवरों का इस्तेमाल कर रहे हैं? हाथी शेर आदि का।

"मनुष्य और जन्तुओं को मारकर खानेवाले राक्षस ज़मीन जोतकर खेती कर रहे हैं? गजब है। खैर, पहरेदार कहाँ है? क्या हम शत्रुओं की नज़र में बिना पड़े, पहाड़ों तक पहुँच सकते हैं?" धूमक ने पूछा।

"वे दुष्ट अपने अपने कामों में लगे हुए हैं। खेती के उपकरणों के सिवाय किसी के पास कोई हथियार नहीं है। क्या मैं कुछ को बाणों से मारूँ?" सोमक ने पूछा।

"जल्दी में ऐसी गल्ती न कर बैठना। यह करके, हम स्वयं ही शत्रु को बता रहे होंगे कि हम यहाँ हैं। जरा सम्भलकर उस पहाड़ की ओर चलो, जिस ओर मन्त्रदण्ड ले जा रहा है।" कहकर धूमक चल पड़ा।
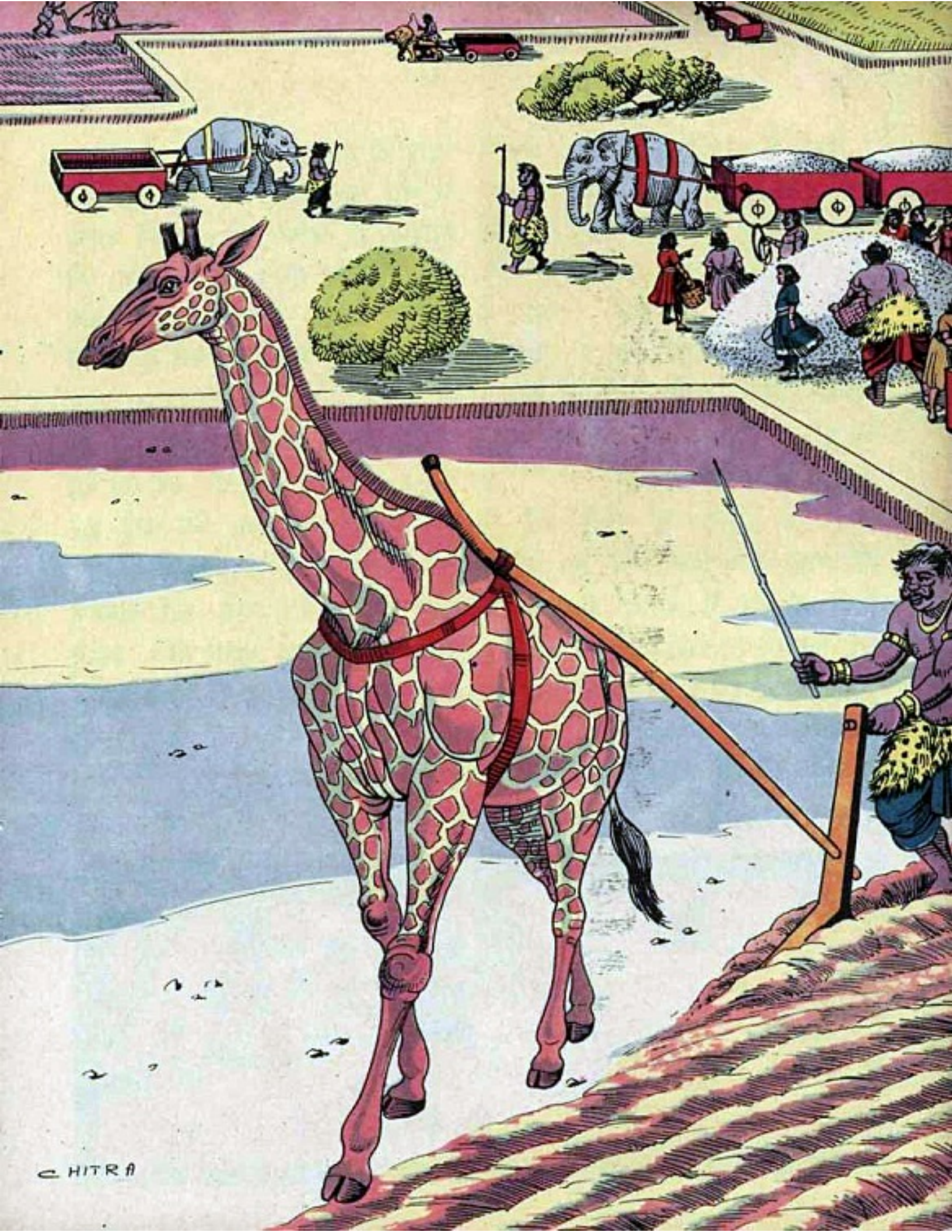
इतने में सुरंग के द्वार के पास जोर से शोर हुआ। तुरत तीनों पेड़ों पर चढ़ गये और सुरंग की ओर देखा। उसके सामने कुछ राक्षस और उनके नौकर झुण्ड बनाकर खड़े थे। जो उनमें "तलवार में माहिर" समझा जाता था, दो तीन ने मिलकर उसको अपने बीच खड़ा किया। वह हाँफता हाँफता, चारों ओर खड़े लोगों को कुछ दिखा रहा था।

"सोम, विरूप वह हमारे बारे में ही उनको कुछ दिखा रहा है। राक्षस थोड़ी ही देर में हमारा पीछा करना शुरु कर देंगे। चलो उस पहाड़ की ओर भागें।" धूमक ने पेड़ पर से उतरकर भागना शुरु किया।

आध घंटे के करीब बिना पीछे देखे, वे तीनों जंगल की ओर भागते गये और पहाड़ की तलहटी तक पहुँचे। उस पहाड़ पर और तलहटी पर, बड़े बड़े पेड़ों और झाड़ियों की भरमार थी। सामने उनको एक छोटा-सा प्रपात दिखाई दिया, उसे देखकर सोमक ने कहा—"बड़ी घास लग रही है। शत्रुओं के बारे में भगवान ही जाने।" वह पानी में उतरकर प्यास बुझाने लगा। तुरत जलपतन बन्द हो गया। जहाँ तब तक पानी बह रहा था, वहाँ उनको ऐसा लगा, जैसे कोई द्वार हो। घबराकर, वे लगातार उसकी ओर देखते जा रहे थे। उन्हें वहाँ मान्त्रिक कालशम्बर की छाया दिखाई दी। जब वे तीनों चुपचाप उस तरफ़ गये, तो द्वार खुल गये। वह भी एक गुफ़ा थी। अन्दर आग साँय साँय जल रही थी।

(अभी है)

रक्षक

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुम जैसे विलासी इस प्रकार कष्ट नहीं उठाते। नागेन्द्र जैसे करोड़पति को भी आपत्ति के समय अपने नौकर की शरण लेनी पड़ी। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, तुम्हें उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरु की।

नागेन्द्र पश्चिमी तट का था। वह व्यापार करके करोड़पति हो गया था। उसके सचिव नाम का लड़का था और सुलोचना नाम की लड़की थी। नागेन्द्र

वेताल कथाएँ

धनी ही नहीं, धर्मात्मा और न्यायप्रिय भी था।

नागेन्द्र के घर समीर नाम का एक युवक सेवक था। उसे अपने मालिक के प्रति बड़ी श्रद्धा और भक्ति थी।
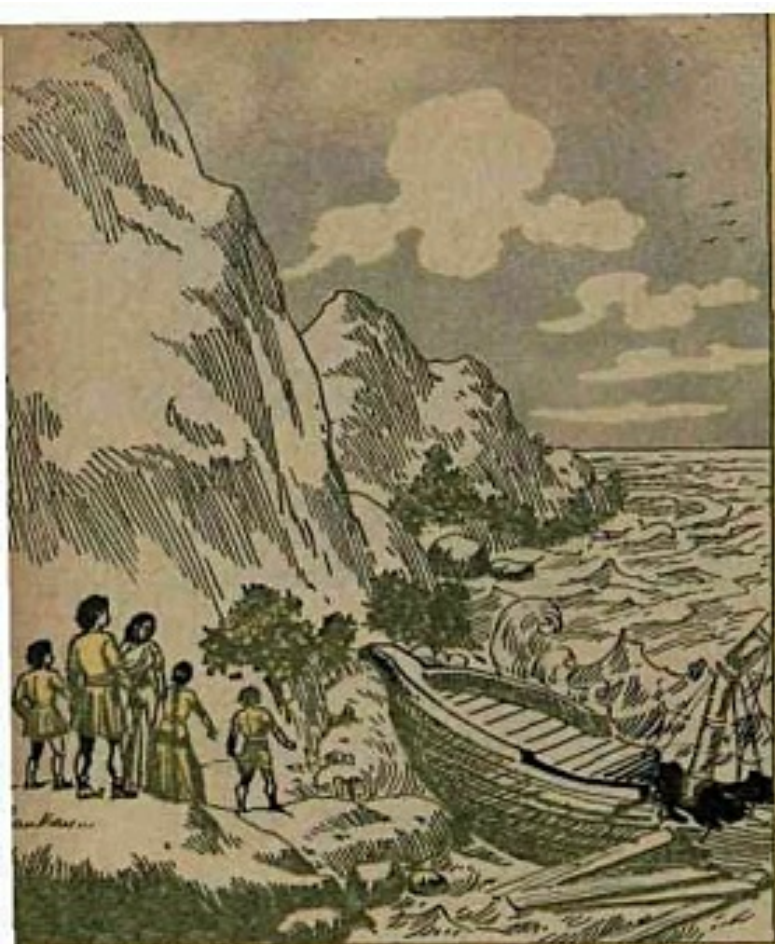
एक बार नागेन्द्र के साले ने अपनी लड़की के विवाह के लिए अपनी बहिन के परिवार को निमन्त्रण भेजा। विवाह में सम्मिलित होने के लिए समुद्र पार करके जाना था। नागेन्द्र अपनी पत्नी और बच्चे और अपने सेवक समीर को साथ लेकर, अपने ही जहाज़ में अपने साले के देश गया। विवाह हो गया। जब वह अपने परिवार के साथ अपने देश जा रहा था, तो समुद्र में जबर्दस्त तूफ़ान आया। नाव तूफ़ान में बह गई और एक द्वीप के पहाड़ से टकराकर चूरचूर हो गई।

उस निर्जन-द्वीप में कैसे जिन्दगी बसर की जाय, यह नागेन्द्र को न सूझा। वहाँ मनुष्य के लिए नितान्त आवश्यक भोजन, वस्त्र, रहने की जगह भी न थी। उनको कैसे प्राप्त किया जाय, यह भी वह न जानता था। उस हालत में समीर ने उनकी मदद की।

वह चूर हुए नाव से उपकरण लाया, उनसे पेड़ों को काटकर, उसने एक घर बनाया। पशुओं का शिकार करके वह लाता और उन्हें खिलाता। उनके चमड़ों से उनके लिए कपड़े बनाता।

इस प्रकार समीर नागेन्द्र परिवार का मुखिया-सा बन गया। चूँकि उसके कहने पर चलना, सबके लिए लाभदायक था। इसलिए उसकी बात को कोई नहीं टुकराता।

इस प्रकार कुछ वर्ष बीत गये। समीर ने तय किया था कि हर रोज सूर्योदय

से सूर्यास्त तक कोई न कोई पहाड़ की चोटी पर खड़े होकर देखे कि कोई नाव उस तरफ़ आ रही है कि नहीं। परन्तु एक नाव भी उस तरफ से न गुजरी।

नागेन्द्र का परिवार अपना पुराना जीवन करीब करीब भूल गया था और नये जीवन का आदि हो गया था, उसी समय नागेन्द्र की लड़की सुलोचना सयानी हुई। नागेन्द्र ने उसका विवाह समीर के साथ करने की ठानी। यह बात सबको भायी।

इस निश्चय के कुछ दिन बाद एक नाव उस द्वीप के पास आयी। जब वह उस तरफ़ आ रही थी, तो समीर ही स्वयं उस समय पहाड़ की चोटी पर था। दूरी पर नाव को देखकर उसने कुछ ईन्धन इकट्ठा किया और उससे आग बनाई। फिर उसमें गीली लकड़ियाँ डाल दीं, ताकि खूब धुआँ निकले। वह धुआँ नाववालों ने देखा और वे द्वीप की ओर आने लगे।

यह नाव एक और व्यापारी की थी। उसने सुन रखा था कि नागेन्द्र का परिवार कहीं समुद्र में गुम हो गया था। उनको सजीव पा, उसने उनका अभिनन्दन किया। अपनी नाव पर उनको सवार करके वह उनको उनके देश पहुँचा आया।

देश वापिस आने के अगले दिन ही, समीर ने नागेन्द्र के पास जाकर कहा—"मुझे अब जाने की आज्ञा दीजिये।" पहिले तो नागेन्द्र ने उसको जाने न दिया। पर जब उसने जाने की जिद पकड़ी, तो उसे बहुत-सा धन देकर, प्यार से भेज दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। स्वामीभक्त समीर जिसने अपने मालिक की आपत्ति के समय इतनी सहायता की थी क्यों अच्छा वक्त आते ही उसे छोड़कर चला गया? उसका विवाह सुलोचना से निश्चित हो चुका था और नागेन्द्र भी वचन देकर कभी मुकरता न था। वह अवश्य अपनी लड़की की उससे शादी करता। उस मौके का भी समीर ने क्यों नहीं फायदा उठाया? इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"निर्जन द्वीप में पहुँचते ही, सबके विचार, भावनायें और सम्बन्ध बदल गये थे। वहाँ के जीवन में न नागेन्द्र मालिक था, न समीर नौकर ही। इन परिवर्तित परिस्थितियों में ही नागेन्द्र ने अपनी लड़की का विवाह समीर से करने की सोची थी। इतने में उनके कष्टों के दिन लद गये। उनका पुराना जीवन फिर वापिस आ गया। परन्तु पुराने सम्बन्ध फिर न स्थापित होते। समीर भी नौकर की तरह न रह पाता और न नागेन्द्र मालिक के नाते उससे काम ही करवा पाता। क्योंकि वह धर्मात्मा था, वह अपना वचन निभाने के लिए अपनी लड़की का समीर के साथ विवाह भी कर देता। परन्तु उस विवाह से न सुलोचना सुखी होती, न समीर ही। इन सब बातों को सोचकर ही समीर चला गया था।"

राजा का इस प्रकार मौनभंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

नेक खलीफा

खलीफा उमर आदर्श व्यक्ति था। उसके यहाँ जो नौकरी चाहता, उसको ये शपथें लेनी पड़तीं, सवारी के पशुओं को बोझ उठाने के काम में नहीं लायेंगे। शत्रुओं को लूटेंगे नहीं, कीमती वस्त्र नहीं पहिनेंगे। नमाज के लिए देरी से नहीं जायेंगे।

"बुद्धि ही सम्पदा है। बुद्धि की तीव्रता ही रक्षा है। अध्ययन ही कीर्ति है।" वह हमेशा कहा करता।

उमर जब खलीफा था, तो मुऐकिब, जो बूढ़ा था उसका खजान्ची था, एक बार जब उमर का लड़का अपनी दादी के साथ खजान्ची के घर गया तो मुऐकिब ने उसे एक चान्दी का सिक्का दिया।

उमर ने अपने खजान्ची को बुलाकर पूछा—"यह क्या काम किया है?"

मुऐकिब ने घबराते हुए पूछा—"मेरी क्या खता हुई है?"

"मेरे लड़के को चान्दी का सिक्का देने का मतलब सारे मुसलमान कौम को ही लूटना है न?" उमर ने कहा।

"इतनी न्यायबुद्धिवाला और कौन होगा? मुऐकिब जिन्दगी भर यह उसके बारे में कहता रहा।

एक दिन रात को खलीफा उमर, असलम अबू जैद के साथ कहीं जा रहा था कि दूरी पर उनको कहीं आग दिखाई दी। पास जाकर देखा, तो कोई बुढ़िया हंडिया में कुछ पका रही थी। उसके पास दो छोटे बच्चे रो रहे थे।

म. मज़हर

"क्या कर रहे हो?" उमर ने उस बुढ़िया से पूछा।

"मेरे बच्चे सरदी और भूख से तड़प रहे हैं। मैं उनके लिए पानी गरम कर रही हूँ। हमारी गरीबी अल्लाह और खलीफा कभी न देखेंगे।" उसने सिर ऊँचा करके कहा।

"तुम्हारी गरीबी देखकर क्या खलीफा यूँहि रहेगा?" उमर ने पूछा।

"जो हर किसी की तकलीफ न जान सके, वह भला खलीफा क्यों बना रहे?" गरीब बुढ़िया ने कहा।

असलम अबू जैद के साथ उमर अपने महल में चला आया। उसने एक थैले में आटा और मर्तबान में बकरी की चरबी ली और उसने अबू जैद से कहा—"जरा, इन्हें मेरी पीठ पर तो लदवा दो।"

"मैं उनको ले आऊँगा।" अबू जैद ने कहा।

"जिस दिन इन्साफ दिया जायेगा, क्या उस दिन मेरे पापों को क्या तुम ढ़ोओगे?" खलीफा ने पूछा।

फिर वह स्वयं उनको ढ़ोकर, उस गरीब के पास गया। वह जाकर हंडिया

में वह आटा और चरबी डालकर, चूल्हा फूँक फूँककर रसोई करने लगा। धुआँ उसकी दाढ़ी में जा चिपका।

रसोई होने के बाद उसने उस स्त्री को और उसके बच्चों को, जब तक उन्होंने न न किया, तब तक खिलाया। हर कौर उसने स्वयं ठंडा करके उनके मुख में रखा। जो कुछ बचा रहा, उस स्त्री को दे दिया।

"आग दिखाई दी और ज्ञानोदय हो गया।" उसने अबू जैद से कहा।

एक बार उमर कहीं जा रहा था कि रास्ते में एक गुलाम अपने मालिक की भेड़ों को चराता दिखाई दिया। उमर रुका। भेड़ें चरानेवाले से उसने एक भेड़ बेचने के लिए कहा। उसने कहा कि भेड़ें उसकी न थीं।

"अच्छे जान पड़ते हो। मैं तुम्हें खरीदकर, तुम्हें मुक्त कर दूँगा। तुम जैसा ईमानदार हमेशा नहीं दिखाई देता।" उमर ने कहा।

एक बार उमर के पास उसके रिश्तेदारिन हफ्सा ने आकर कहा—"पिछले युद्ध में, सुनती हूँ कि तुम्हें काफी पैसा मिला है। रिश्तेदारिन के नाते, मैं उसमें से कुछ लेने आयी हूँ।"
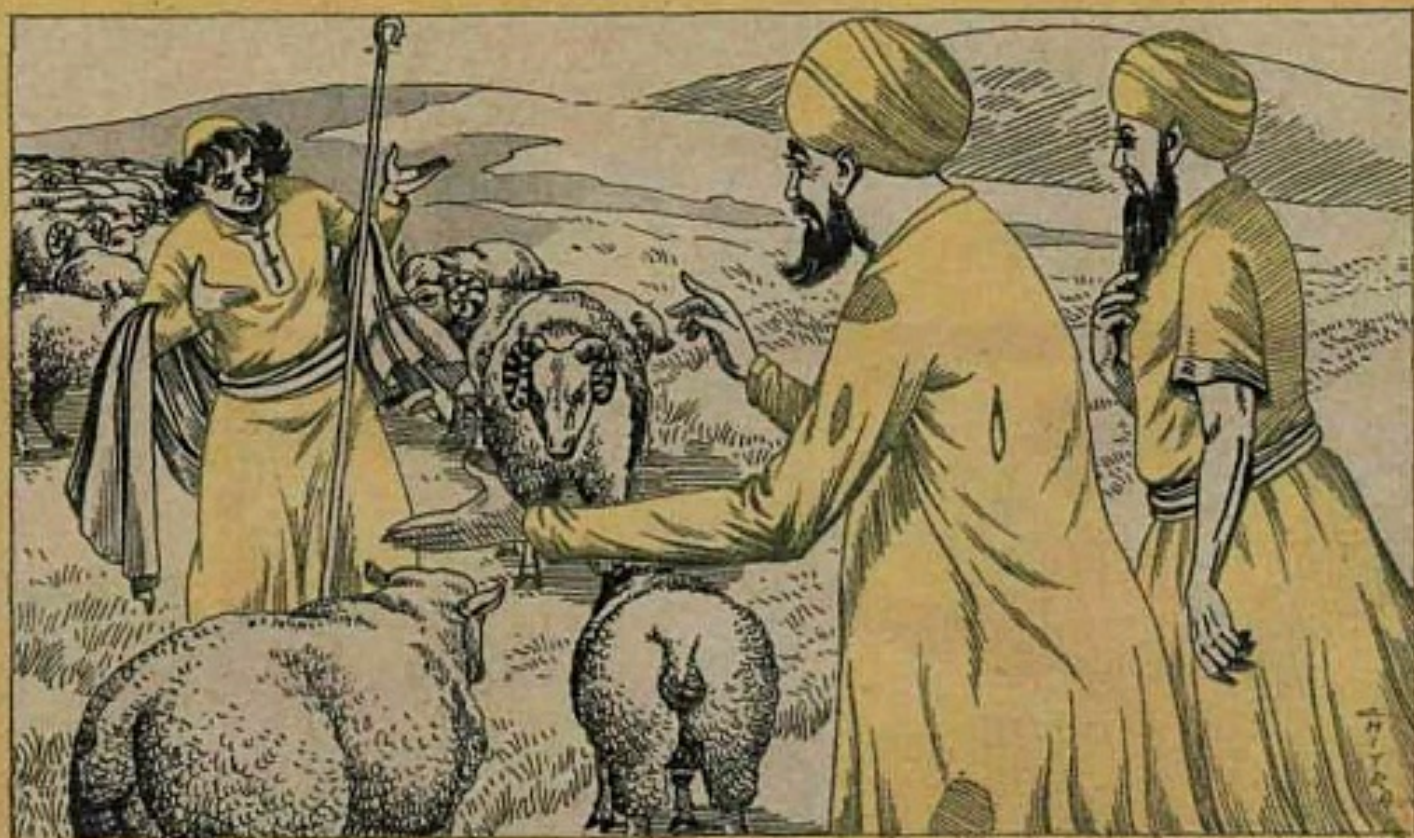
"हप्सा, अल्लाह ने मुझे मुसलमानों की सम्पत्ति का रक्षक नियुक्त किया है। यह सब धन उनका है। तुम मेरे पिता की तरफ से मेरी रिश्तेदारिन हो, तुम्हें खुश करने के लिए ही मैं कुछ नहीं दे सकता। बल्कि मैं इसको अपने काम के लिए भी नहीं ले सकता हूँ।" उमर ने कहा।

उमर जब एक बार मिट्टी में बैठा प्रवचन कर रहा था कि मस्लम नाम के व्यक्ति ने कहा—"आप जैसे बड़े आदमी को मिट्टी पर बैठकर प्रवचन करना नहीं शोभता। कम से कम किसी मसनद का सहारा तो लीजिये।"

"बेटा, क्या तुम चाहते हो कि जब मैं अपनी समाधि से उट्ठूँ, तो मेरे साथ एक मसनद भी उठे। क्या ख्याल है तुम्हारा?" उमर ने पूछा।

उस समय में मामूली आदमियों में भी काफी विवेक हुआ करता था, खलीफा उमर के समय में ही यह घटना हुई थी।

एक दिन एक आदमी अपनी भेड़ें चरा रहा था। उसके पास उसके एक नवयुवक मित्र ने भेड़ों के झुण्ड में दो कुत्ते जैसे जानवरों को देखकर कहा—"उन कुत्तों को झुण्ड के बीच में क्यों रख रखा है?"

"वे कुत्ते नहीं हैं। वे पाल्तू भेड़िये हैं। चूँकि मैं इस झुण्ड का मालिक हूँ। इसलिए वे कुछ हानि नहीं करेंगे। अगर मन में बुराई न हो, तो सारा शरीर ही ठीक रहता है।" भेड़ों के झुण्डवाले ने कहा।

पिता का प्रेम

एक गाँव में राम और सीता नाम के पति पत्नी रहा करते थे, गाँव के पास ही उनकी कुछ ज़मीन थी। उसी ज़मीन में एक झोंपड़ी में वे रहते। जो कुछ खाने पीने के लिए ज़रूरी था, वे अपनी ज़मीन में ही पैदा कर लेते।

बस, उनको एक ही कमी थी। उनके कोई सन्तान न थी। बच्चों के लिए सीता कितने ही धर्मक्षेत्र हो आयी थी, कितनी ही मनौतियाँ की थीं उसने। आखिर जब वे अधेड़ हो गये, तो उनके एक लड़का हुआ। उसको देखकर माँ बाप बड़े खुश हुए। उसका नाम उन्होंने शिव रखा और उसका बड़े लाड़ प्यार से पालन पोषण करने लगे।

शिव जब बड़ा हो गया, तो राम ने उसकी एक लड़की से शादी कर दी। जब घर में बहू आ गई, तो उनकी लड़की की कमी भी जाती रही। जल्दी ही शिव के एक लड़का भी हुआ। तब तो उन बूढ़ों की खुशी का ठिकाना न था।

शिव को, एक लड़के के पिता होने पर भी, उसके माँ बाप ने कोई कष्ट न होने दिया। जो कुछ मेहनत का काम होता, वह स्वयं करता और अपने लड़के से कोई कष्ट का काम न करवाता। इस प्रकार जब बूढ़ा बाप घरबार के लिए इतनी मेहनत कर रहा था, तो शिव को उसकी सहायता करने का भी मौका न मिलता। शिव को यह बुरा लगता।

ज़मीन जोतने के लिए राम बैल और हल लेकर निकल पड़ा। गरमी बड़ी तेज़ थी, उस गरमी में अपने पिता को हल

अजय कुमार

चलाता देख, शिव को बड़ा दुःख हुआ। वह अपने पिता के पास गया। उसके हाथ से हल लेकर उसने कहा—"माँ तुम्हें खाने के लिए बुला रही है। इस बीच मैं हल चला दूँगा।"

राम घर गया, कुँये के पास नहा धोकर, अन्दर सीता का परोसा खाना खाकर वह बाहर आया। उसने कड़ी दुपहरी में अपने लड़के को हल चलाता देखा। वह न रह सका। तुरत धोती कसकर वह अपने लड़के का पास गया। "देखो, कैसी कड़ी गरमी पड़ रही है। तुम पहिले अन्दर जाओ।" उसने हल पकड़ना चाहा।

शिव को पिता की बात पर हँसी आयी। पर उसने हल न छोड़ा। वह और जोश से चलाता गया। राम ने लड़के को मनाया, पर कोई फायदा नहीं हुआ। राम ने कुछ देर सोचा। फिर घर के अन्दर गया और अपने पोते को उठाकर लाया और जहाँ शिव हल चला रहा था उसके पास की मुड़ेर पर उसे लिटा दिया।

शिव ने अपने लड़के को देखते ही हल छोड़ दिया। भागा भागा अपने लड़के के पास गया। अपनी पगड़ी उतारी और बच्चे के सिर पर उसे ढकते हुए कहा—यह क्या किया तुमने पिताजी! इस बच्चे को लाकर इस कड़ी धूप में लिटा दिया?"

राम ने हँसकर कहा—"जितना प्रेम तुमको अपने लड़के पर है, क्या मुझे अपने पर नहीं है? पता लगा अब पिता का प्रेम कैसा होता है?"
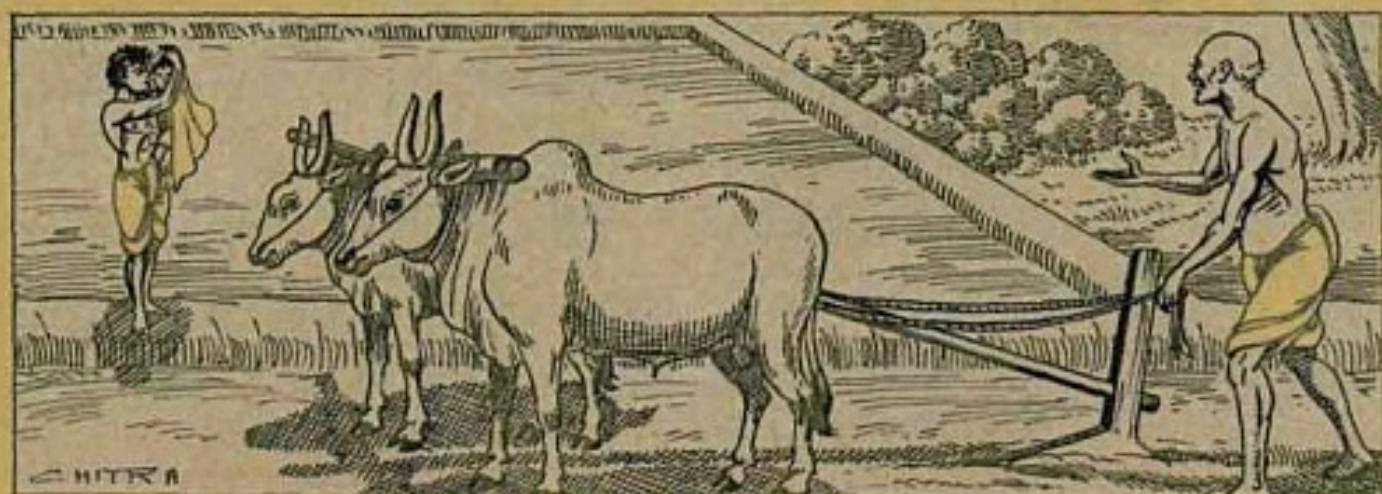
लोभ का लाभ

एक गाँव में मुनिस्वामी नाम का एक ज़मीन्दार रहा करता था। वह बिना किसी कमी के अपनी पत्नी और दो लड़कों के साथ आराम से, ज़िन्दगी बसर किया करता। एक बार एक ज्योतिषी आया, उसने कई के हाथ देखे और उनका भविष्य भी बताया। उसने मुनिस्वामी का हाथ देखकर कहा—"जब तक तुम अपनी जगह नहीं बदल लेते, तब तक तुम्हारा अच्छा समय नहीं आयेगा। अब जो कुछ तुम्हारे पास है, उसमें से कौड़ी भी न रहेगी। एक साल तुम नाना कष्ट झेलोगे। उसके बाद राजयोग प्रारम्भ होगा। उसके साथ तुम्हें कीर्ति और प्रतिष्ठा भी मिलेगी।"

मुनिस्वामी में राजयोग प्राप्त करने की कीर्ति, प्रतिष्ठा पाने की इच्छा प्रबल हो उठी। जो कुछ उसके पास था, उसने उस ज्योतिषी को दे दिया, पत्नी और लड़कों को साथ लेकर, उसने अपना गाँव छोड़ दिया और संचार के लिए निकल पड़ा।

दो दिन बाद मुनिस्वामी का परिवार एक गाँव पहुँचा। उसने एक ढ़ाबेवाली की पास जाकर कहा—"मैं और मेरे लोग, बिल्कुल बेठिकाने हैं, बेबस हैं, अगर तुमने हमें रहने को जगह और खाने को कुछ दे दिया, तो जो कुछ तुम कहोगी वह हम करते यहाँ रहेंगे।"

वह मान गई, तय हुआ कि मुनिस्वामी रोज जंगल जाकर, लकड़ी लाया करे। उसकी पत्नी रसोई किया करे और लड़के घर में ही इधर उधर के काम किया करें।

सोमसुन्दर
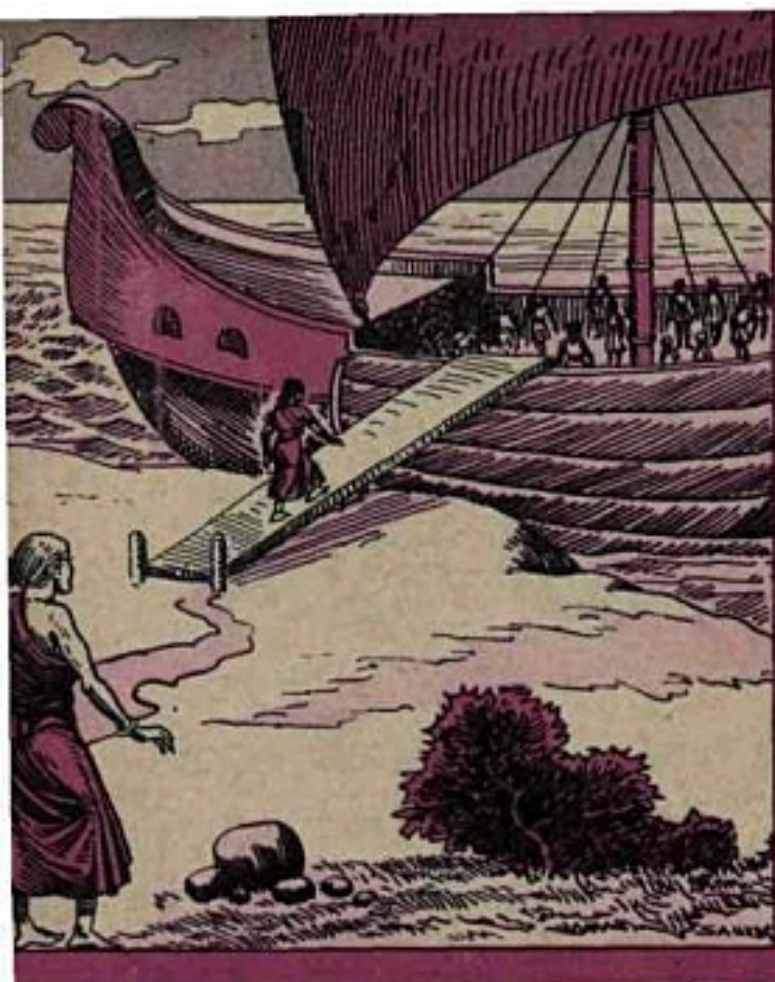
एक दिन उस स्त्री के यहाँ एक व्यापारी आया। भोजन करते समय उसने मुनिस्वामी की पत्नी चम्पावती को देखा और उस पर उसका मन लग गया। उसने ढाबेवाली से इस बारे में कहा भी। उसने मुख पर हाथ रखकर कहा—"उस स्त्री का पति है। बच्चे हैं। पर स्त्री को चाहना महापाप है।"

व्यापारी ने ढाबेवाली के हाथ में रुपयों भरी एक छोटी-सी गठरी रखते हुए कहा—"तुम्हें कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं है। तुम इस चम्पावती को किसी बहाने, घाट में मेरी नाव तक पहुँचा दो।"

ढाबेवाली रुपये के लालच में आ गई, उसने शाम को चम्पावती से कहा—"आज जो नाव आई है, उसमें रसोई के काम के लायक बहुत-सी चीज़ें हैं। आओ, देख आयें, हमें एक बड़ा मर्तबान भी चाहिये।"

उस दिन शाम को, ढाबेवाली और चम्पावती नदी के पास गये, तट से नाव में जाने के लिए एक तख्ता लगा हुआ था। उसे देख ढाबेवाली ने कहा—"अगर मैंने इस पर पैर रखा, तो मैं चकरा जाऊँगी और नदी में जा गिरूँगी। तुम अन्दर जाकर देख आओ कि हमारे लायक क्या क्या चीज़ें हैं। जिनकी ज़रूरत होगी, उन्हें खरीद लेंगे।" कहकर नदी के किनारे वह रेत पर लेट गई।

व्यापारी ने पहिले ही अपने आदमियों को कह रखा था कि चम्पावती के नाव में आते ही, वे नाव को छोड़ दें। नाव बीच धारा में बहने लगी। चम्पावती यह जान भी न सकी। उसने व्यापारी को देखकर पहिचान लिया। "आप ज़रा अपने बर्तन वगैरह दिखा सकेंगे?"

"देखने की क्या बात है ? यह सारी नाव ही तुम्हारी है। मैं भी तेरा हूँ। अपने शहर पहुँचकर मैं तुम्हें क्या नहीं दूँगा, आज से जान लो कि तुम्हारा भाग्य खिल उठा है।" व्यापारी ने कहा।

तब चम्पावती को मालूम हुआ कि नाव नदी के बीचों बीच बहती जा रही थी। "अरे मेरे वे....मेरे बच्चे।" कहती वह नाव से नदी में जा कूदी। उसको रोकने के लिए व्यापारी भी पानी में कूदा। नाव के नौकर भी पानी में कूदे। पर वे केवल चम्पावती को ही बचा पाये। तब व्यापारी के प्राण पखेरू उड़ चुके थे। नौकरों ने व्यापारी के शव को और चम्पावती को भी, व्यापारी के नगर पहुँचाया। चूँकि वे व्यापारी की चाल अच्छी तरह जानते थे, इसलिए उसके बारे में उन्होंने व्यापारी के लड़के से भी कहा।

चम्पावती को अगर छोड़ दिया जाता, तो उसके पिता की पोल खुल जाती। इसलिए व्यापारी के लड़के ने चम्पावती से कहा—"इस नगर के कोतवाल मेरे पिताजी का अच्छे मित्र हैं। यदि मैंने उनसे शिकायत की कि मेरे पिता की मृत्यु के तुम ही कारण हो, तो वे तुम्हें अवश्य फाँसी पर चढ़ा देंगे। क्या ज़रूरत है इस सब की ? अगर तुम हमारे घर काम करती रहीं, तो मैं कह दूँगा कि मेरे पिताजी दुर्घटनावश पानी में डूबकर मर गये थे। क्या तुम हमारे घर नौकरानी का काम करने के लिए तैयार हो ?"
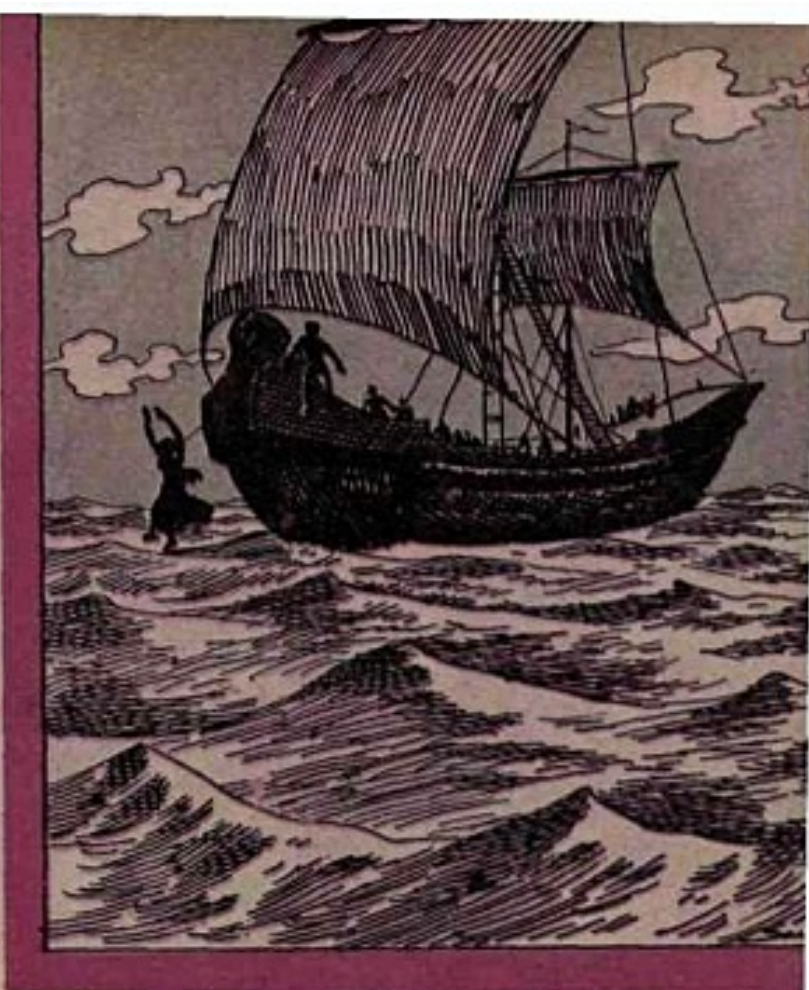
उसकी बात सुनकर चम्पावती डरी नहीं। लड़का जान गया कि वह मरे आदमी से बदला नहीं लेना चाहती थी। जब तक भाग्य साथ नहीं देता, तब तक चम्पावती को भी कहीं न कहीं काम

करना ही था। इसलिए वह उस लड़के की बात मान गई।
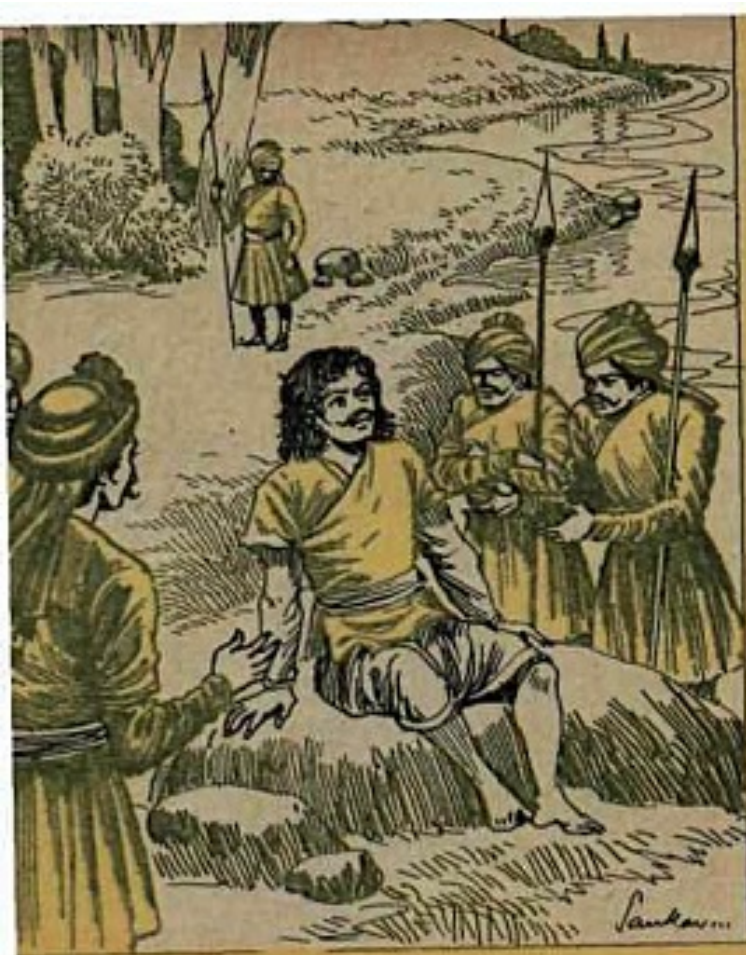
उधर जब मुनिस्वामी लकड़ियों का गट्ठर लेकर वापिस आया, तो उसके दोनों बच्चे जोर जोर से रो रहे थे। "माँ कहीं चली गई है।" उन्होंने अपने पिता से कहा। जब उसने ढ़ाबेवाली से पूछा, तो वह यकायक उबलने लगी—"मुझे क्या मालूम कि वह कहाँ जा मरी है? कुछ बताया नहीं, कहा नहीं? लाचार, अब मैं ही रसोई कर रही हूँ। चारों मेरे सहारे पेट भर रहे हो। न एहसान की जरूरत है, न तुम्हारे लड़कों की ही। तुम अपना रास्ता नापो यही मेरे लिए काफ़ी एहसान है।" उसने यूँ फटकार बताई।

मुनिस्वामी ने वह रात वहीं काट दी। अगले दिन अपने दोनों लड़कों को लेकर वह सड़क पर निकल पड़ा। शाम के समय वे एक नदी के किनारे गये। मुनिस्वामी ने नदी पार करनी चाही, पर वहाँ न कोई नाव थी, न कुछ और ही। यही नहीं, मुनिस्वामी के पास एक दमड़ी भी न थी। वह तैरना जानता था, पर दो बच्चों को पीठ पर बिठाकर कैसे तैरे?

इसलिए मुनिस्वामी ने एक लड़के को वहीं बैठने के लिए कहा। दूसरे को कन्धे पर बैठाकर, नदी पार करके, उसे किनारे पर उतार दिया। जब वह दूसरे लड़के के लिए वापिस आ रहा था, तो वह एक भँवर में फँस गया। वह उसे नीचे खींचने लगी। वह बेहोश हो गया।

जब मुनिस्वामी को होश आया, तो उसने देखा कि उसके चारों ओर भीड़ खड़ी थी। उसकी वे तरह तरह से देखभाल कर रहे थे। जब उसे थोड़ा-सा होश आया, तो उसे लगा, जैसे कि उसका राजयोग आ गया हो।

हुआ कुछ ऐसा कि कुछ दिन पहिले ही उस नदी के तट के एक नगर का राजा बिना किसी उत्तराधिकारी के यकायक मर गया था। उसके मरने के अगले दिन ही मन्त्री से सपने में नगरदेवी ने कहा—"तुम्हारा होनेवाला राजा नदी में बहा आ रहा है। उसकी प्रतीक्षा करो।" मन्त्री ने यह बात राजमहल में सबको बताई, नदी के किनारे दिन रात लोगों का पहरा रखा। उन्होंने ही मुनिस्वामी को बाहर खींचा था और उसे राजा बना दिया था।

राजयोग मिल गया। राज्याभिषेक भी हो गया। पर मुनिस्वामी को अपने बच्चों और पत्नी की चिन्ता सताती रही।

उसे नदी में बहा जाता देख, दोनों किनारों पर बैठे उसके दोनों बच्चे जोर जोर से रोने लगे। एक धोबी उनको ले आया। अपने घर में उनको पाल पोसकर उसने बड़ा किया। उसकी अपनी कोई सन्तान न थी।

उनका नाम राम और भीम था। वे एक व्यापारी के यहाँ चौकीदार बने। इसके कुछ दिन बाद ही व्यापारी के घर चोर आया। उन्होंने उसे पकड़कर कोतवाल को सौंप दिया और कोतवाल से उन्होंने ईनाम भी पाया। यह देख व्यापारी को लालच हुआ। "मैंने तुमको वेतन देकर, चोरों को पकड़ने के लिए ही रख रखा है। तुमने उस चोर को मेरे घर ही पकड़ा है। इसलिए वह ईनाम मुझे मिलना चाहिए।" उसने राम और भीम से कहा। राम और भीम इसके लिए नहीं माने। उन्होंने अपना ईनाम धोबी और उसकी पत्नी को दे दिया। व्यापारी उनका कुछ न बिगाड़ सका, पर अन्दर ही अन्दर वह बड़ा नाराज था।
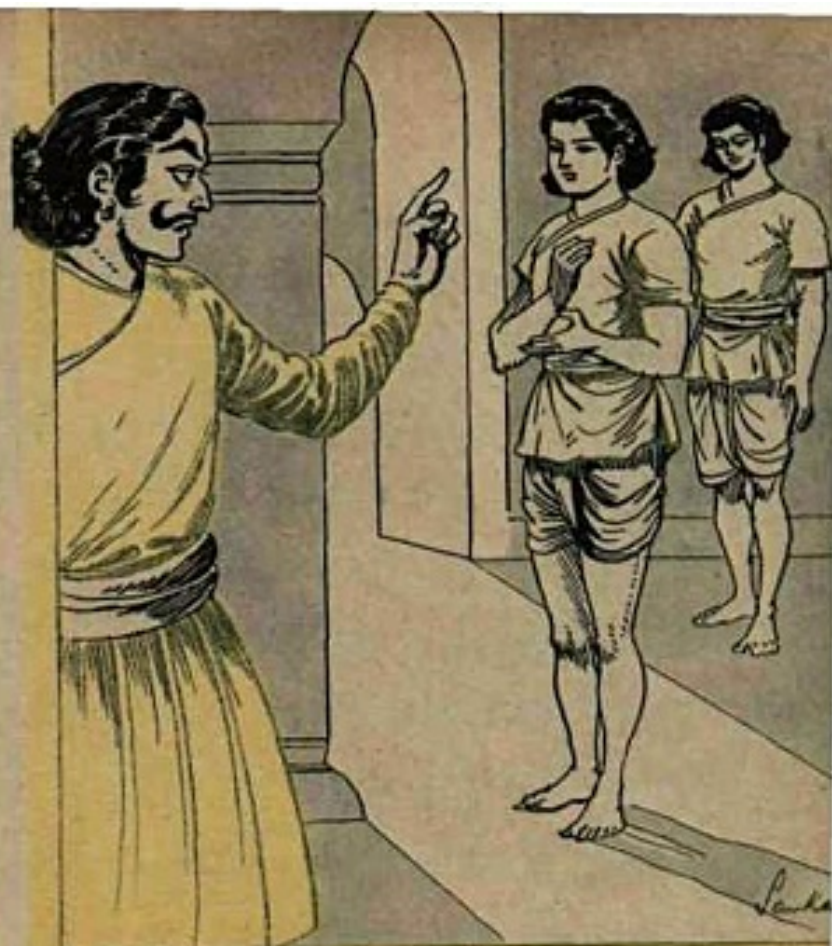
इस व्यापारी के घर ही चम्पावती कई सालों से थी। जब उसने चोरों के पकड़नेवालों के बारे में सुना, तो उसने सोचा कि तब तक उसके लड़के भी उतने बड़े हो गये होंगे। उसने उनको देखना चाहा। काम के हो जाने के बाद वह उनके पास गई। जब उसने पूछा कि "तुम्हारे क्या नाम हैं?" तो उन्होंने बताया "राम और भीम।"

चम्पावती उत्सुक हो उठी। "मेरे भी दो लड़के थे। उनके नाम भी ये ही थे। तुम्हारे माँ बाप कौन हैं?

उन्होंने अपनी बचपन की बातें एक एक करके उनको सुनाईं।

यह देख व्यापारी को अच्छा मौका मिला। वह अपनी कुछ चीजें लाया और उसने माँ और बच्चे जहाँ बतिया रहे थे, उन्हें फेंक दीं। "तुम हमारी नौकरानी से क्या साजिश कर रहे हो? क्या इन चीजों को चुरा रहे हो? देखो अभी तुम्हारी खबर लेता हूँ।" कहकर उसने एक सेवक को बुलाया, कोतवाल को बुलवाया। उसने शिकायत की, कि नौकरानी से मिलजुलकर उसके चौकीदार उसकी चीजें चोरी कर रहे थे, इसलिए उनको पकड़ लिया जाय।

कोतवाल को उस शिकायत पर विश्वास न हुआ। उसने सोचा कि इस शिकायत पर राजा ही निर्णय दें तो अच्छा है। इस प्रकार मुनिस्वामी अपनी पत्नी और बच्चों को फिर से देख सका। उसने उस धोबी को ढ़ेर से ईनाम दिया, जिसने उसके लड़कों को पालापोसा था। उसके बाद मुनिस्वामी का परिवार, राजाओं की तरह सुख से जीने लगा।

दो भाई, दो पत्ते

किसी दूर देश में दो भाई रहा करते थे। वे बड़े गरीब थे। उनकी एक पुरानी झोंपड़ी थी। शाक सब्जी पैदा करने के लिए दो चार क्यारियाँ और धान के लिए थोड़ी-सी जमीन थी। वे बड़े हो गये थे, पर उन्होंने अपनी जमीन का बँटवारा नहीं किया। वे उसी झोंपड़ी में रहते, चप्पल बनाते, उनकी मरम्मत करते, किसी तरह जीवन निर्वाह कर रहे थे।

पर, बहुत देर इस प्रकार जीवन निर्वाह न कर सके। शहर से कोई मोची आया और उन्हीं के गाँव में एक घर लेकर, इन भाइयों के मुकाबले में वह व्यापार करने लगा। सब उससे ही चप्पल बनवाते, मरम्मत करवाते और भाइयों का मुख तक देखना लोगों ने छोड़ दिया।

एक रात बड़ी कड़ाके की सरदी हुई, सब आग जलाकर हाथ सेंक रहे थे।

"हमारे पास लड़कियाँ होतीं, तो हम भी आग जला लेते।" बड़े भाई ने कहा।

"हमारे घर के सामने के मैदान में कभी जंगल हुआ करता था। उसको जमीन्दार ने कटवा दिया। अब भी वहाँ बड़े बड़े पेड़ों की जड़ें दिखाई देती हैं। पास में ही एक बड़ी जड़ बाहर दिखाई दे रही है। उसे उखाड़ कर जलाकर आग सेंक लेंगे।" छोटे भाई ने कहा।

दोनों दीया लेकर बाहर मैदान में गये। वे जड़ खोद लाये और उसे जलाया। न जाने वह कब से सूख रही थी कि जल्दी जल्दी वह जलने लगी और सारी झोंपड़ी में गरमी हो गई।

राम कुमार

इतने में उस जड़ के एक खोल से कोयल की "कूह कूह" सुनकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उनके देखते देखते उसके खोल से एक कोयल बाहर निकली। वे अचम्भे में थे कि उस कोयल ने कहा— "भाइयो, यह कौन-सी ऋतु है?"

"कार्तिक मास" भाइयों ने कहा।

"मैं खोल में सो रही थी, पर यह गरमी देख, मैंने सोचा कि वसन्त आ गया है। संक्रान्ति तक मुझे कहीं सोने दो। मैं तुम्हारा एहसान मानूँगी।" कोयल ने कहा।

"जितने दिन तुम चाहो हमारे यहाँ रहो।" भाइयों ने कहा।

उन्होंने उसके लिए एक घोंसला तैयार किया। वह उसमें घुसकर सो गई। वह कई महीने सोती रही। फिर नव वर्ष के दिन वह उठी। "कूह कूह" वह चिल्लाई। उसने भाइयों से कहा—"अब मुझे संसार में घूम घूम कर बताना है कि वसन्त आ गया है। वापिस आते आते बताओ, आपके लिए क्या लाऊँ?"

"सब कष्टों का कारण गरीबी है। हमारी गरीबी हटाने के लिए अगर कहीं तुम्हें कोई मोती या हीरा मिले, तो हमारे लिए लेते आना।"

"जहाँ मोती, रत्न, हीरे वगैरह होते हैं, वहाँ मैं नहीं जाती। मैं उनके बारे में नहीं जानती। जिन जंगलों में मैं घूमती हूँ वहाँ दो विचित्र पेड़ हैं, एक के पत्ते गिरते ही सोने के पत्ते हो जाते हैं। उसके पास एक और पेड़ है, उसके पत्ते हमेशा हरे ही रहते हैं। तोड़े जाने पर, न वे मुरझाते हैं, न सूखते हैं, न उनका रंग ही बदलता है। जो उस पत्ते को अपने पास रख लेते हैं, उन्हें किसी प्रकार की

चिन्ता नहीं होती। इन पत्तों में से जो तुम चाहोगे, मैं ले आऊँगी।" कोयल ने कहा।

"तो मुझे सोने का पत्ता ला देना।" बड़े भाई ने कहा।

"मुझे वह पत्ता लाओ, जो कभी नहीं सूखता है।" छोटे भाई ने कहा।

तुरत कोयल उड़ गई।

जब वर्षायें शुरु होने लगीं, तो कोयल वापिस आ गई। उसकी चोंच में दो पत्ते थे एक सोने का पत्ता था और दूसरा मामूली पत्ता। सोने के पत्ते को बड़े भाई ने ले लिया मामूली पत्ते को छोटे भाई ने।

"अगले साल मैं तुम्हें फिर इसी तरह के पत्ते ला दूँगीं" कहकर कोयल चली गई।

सोने का पत्ता हाथ में आते ही, बड़े भाई, छोटे भाई को नीची नज़र से देखने लगा। "इसे शनि ने पकड़ रखा है। इसलिए ही इसने यह फाल्तू पत्ता मँगवाया है। इसकी शनि के कारण ही मेरी इतने बुरी हालत रही।" कहकर उसने अपने भाई से अलगौझा कर लिया और

चप्पलों का काम वह स्वयं करने लगा। यह जानते ही कि उसके पास सोना आ गया था जो स्त्री उससे विवाह करने के लिए मना करती आयी थी स्वयं उससे विवाह करने के लिए पास आयी। शहर से जो मोची आया था उसने उसको अपने काम में साझीदार बना लिया।

जब भाई की हालत यूँ सुधर रही थी, तो छोटे भाई की हालत और बिगड़ती जाती थी। उसके पास घर और थोड़ी सी जमीन बाकी रह गई थी। उसने चप्पल बनाना छोड़ दिया। घर के आस

पास शाक सब्जी पैदा करता। मैदान में जो नदी बहती थी उसके किनारे जो कोई कन्द मूल होते उन्हें खा पीकर अपना पेट भर लेता। सब उसको नीची नज़र से देखते। हालाँ कि उसकी गरीबी पहिले से कहीं अधिक बढ़ गई थी और उसका भाई भी उससे अलग हो गया था। पर उसे कोई दुख न था और तो और उसे ऐसा लगा जैसे उसकी जिन्दगी में कोई कमी ही न हो।

इधर उस गाँव के जमीन्दार की राजा के दरबार में नौकरी जाती रही और वह मैदान के सिरे के अपने बंगले में आकर रहने लगा। नौकरी ही न गई थी उसके शत्रुओं ने उसका इतना अपमान किया था कि वह राजधानी में सिर उठाकर न चल सकता था। इसलिए वह अपने गाँव चला आया और दिन रात फ़िक्र में बिताया करता।

एक दिन जब जमीन्दार, नदी के पास टहल रहा था तो उसे पास ही छोटा भाई दिखाई दिया। दोनों में थोड़ी देर बातचीत हुई। इतने में जमीन्दार का मन हल्का-सा हो गया। जब वह घर वापिस पहुँचा तो उसके नौकर चाकरों को अचरज हुआ। वह बड़े मजे में, जोश में था। नौकरों से खुशी खुशी बात कर रहा था। शिकार की तैयारियाँ करने लगा। अपनी जमीन्दारी के लोगों को वह कभी कभी दावतें देता। उनके मनोरंजन की व्यवस्था करता।

सारे गाँव में यह बात फैल गई कि जमीन्दार में यह परिवर्तन इसलिए आया था क्योंकि उसने थोड़ी देर छोटे भाई से बातचीत की थी। उसके झोंपड़े में गरीब और धनी आया करते और उससे

बात करके अपने दुख भूल जाया करते। जिससे जितना बनता उसे उतना वे दे भी जाते। छोटे भाई की ख्याति राजा तक पहुँची। राजा ने दूत भिजवाकर, उसे बुलवाया। वे उस के लिए बहुत से आभूषण, वस्त्र, आदि कीमती चीज़ें लाये।

तब तक कोयल ने उसे चार पत्ते लाकर दे दिये थे। छोटे भाई ने उन्हें कम्बल में रखकर, उसे मोड़कर, कन्धे पर डाल लिया और राजा का अतिथि होने वह निकल पड़ा।

राजा ने यदि छोटे भाई को बुलाया था, तो इसके पीछे एक कारण था, राज्य में सब कुछ ठीक था, पर लोग बहुत धन के लालची हो गये थे। गरीबों में भी धोखा, घूँसखोरी, झूट बोलना अधिक हो गया था। राजा के पास रोज सैकड़ों शिकायतें आया करतीं। फरियाद करनेवाले बड़े लोग थे और शिकायतें भी बड़े लोगों के बारे में थीं। राजा अपने कर्मचारियों में से किसी पर भी विश्वास नहीं कर पा रहा था। राजा के परिवार में भी शान्ति न थी। महल के सब नौकर चोर थे। उनकी

में रखा और रोज दरबार चलाता रहा। दरबार में मन्त्री, सामन्त वगैरह आते। किसी ने न पूछा कि वह कौन था, सब उससे बात करना चाहते।

अब छोटे भाई में मोची के लक्षण न थे। उसके हाव-भाव, सब एक बड़े राजकर्मचारी के से हो गये थे। चाहे कोई कुछ कहता, वह अपने कन्धे से काला कम्बल न उठाता। "यह मेरी असली दशा की याद दिलाता है। हम राजदरबार में हैं, इसलिए हमें अपना असली जीवन नहीं भूल जाना चाहिए।" छोटा भाई कहा करता और सब यह सुन खूब खुश हो जाते।
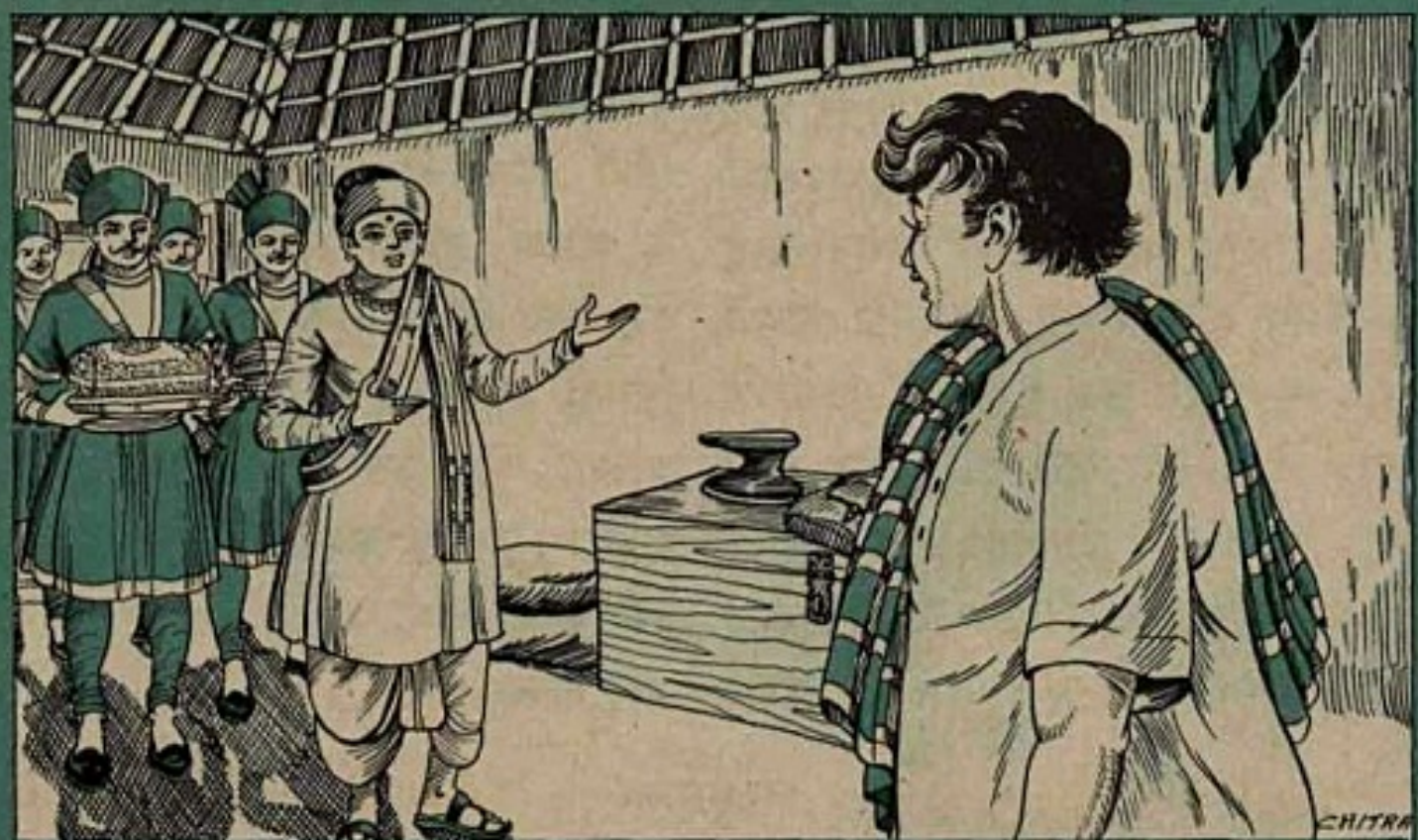
तरफदारी करनेवाले कुछ राज परिवार में भी थे। नौकरों को लेकर, उनमें आपस में झगड़ा होता।

इस कठिन परिस्थिति में राजा ने छोटे भाई को बुलवाया था। उसका राजदरबार में पैर रखना था कि सबने झगड़ा बन्द कर दिया और वे एक दूसरे को चाहने लगे। कर्मचारी एक दूसरे की शिकायत करना छोड़, एक दूसरे का आदर करने लगे। राजा ने, जो कुछ छोटे भाई के बारे में सुना था, वह बिल्कुल ठीक निकला। इसलिए राजा ने उसको अपने ही दरबार

यह जान कि छोटे भाई का राजदरबार में आदर हो रहा था, बड़े भाई को ईर्ष्या हुई। "जब दो तीन हरे पत्तों के पा जाने के कारण, उसकी इतनी प्रतिष्ठा है, तो मेरे पास तो सोने के पत्ते हैं, मेरी भला कितनी प्रतिष्ठा होगी। मैं भी राजधानी जाऊँगा और उससे हज़ार गुना गौरव पाऊँगा।" यह अपनी पत्नी से कहकर, उसे साथ लेकर, वह भी राजधानी की ओर निकल पड़ा।

वे दो चार दिन पैदल चलते चलते रहे। एक दिन राजधानी के पास के एक जंगल में भोजन करने के लिए वे रुके। तब तक वे जो भोजन साथ लाये थे, वह करीब करीब खतम हो चुका था। कुछ थोड़ा-सा बच गया था। वे उसे खाकर, तसल्ली कर लेना चाहते थे कि वहाँ एक स्त्री आयी, उसके सिर पर एक टोकरा था। "यहाँ कोई कुँआ है शायद। मैं भी पानी ढूँढ़ रही हूँ।" यह कहकर, उसने अपने सिर का टोकरा उतार दिया।

उस टोकरे में से अच्छे अच्छे पकवानों की सुगन्ध आ रही थी। बड़ा भाई और उसकी पत्नी, उस टोकरे की ओर देख लार टपकाने लगे।

"तुम देखने में तो बड़े रईस मालूम होते हो, क्या तुम मेरे पकवान खाओगे? अगर खाना ही चाहो, तो बहुत कुछ है खाने को...." उस स्त्री ने कहा।

"अगर तुम प्रेम से दो, तो हमें लेने में कोई एतराज नहीं है। देनेवाले के कुल से अधिक, अच्छे मन की महत्ता है।" बड़े भाई ने गम्भीरता से कहा।

उस स्त्री ने अच्छे अच्छे पकवान उन दोनों को दिये। टोकरे की तह में रखी खीर लेकर, उनको पिलायी। उस खीर में बेहोशी की दवा थी। उसके पीने के कुछ देर बाद ही दोनों बेहोश हो गये।

इसके बाद उस स्त्री ने उनका सब कुछ ले लिया, सिवाय उन कपड़ों के जो उन्होंने पहिन रखे थे। इतने में वहाँ उसका दस वर्ष का लड़का एक कम्बल लेकर आया—"शहर में क्या मिला?" उसकी माँ ने उससे पूछा।

"कुछ नहीं मिला। मैं आधी रात के समय महल के पास से जा रहा था कि

महल की खिड़की में से यह कम्बल गिरा, मैंने खाली हाथ नहीं आना चाहा, इसलिए मैं इसे ले आया।" लड़के ने कहा।

उस स्त्री ने कम्बल देखकर कहा, यह तो किसी भी काम का नहीं है। इन दोनों ने हमें काफ़ी दे दिया है। इसे इनके लिए छोड़ दो।" कहकर उसने वह कम्बल पति पत्नी पर डाल दिया। लड़के को साथ लेकर, टोकरा उठाकर वह अपने रास्ते चली गई।

वह कम्बल छोटे भाई का ही था। राजा ने उसको एक नौकर दिया। उसमें राजाओं की शान थी, कन्धे पर कम्बल डालनेवाले की नौकरी करना, उसकी शान के खिलाफ़ था। इसलिए जब छोटा भाई सो रहा था, तो उसने वह कम्बल उठाकर खिड़की में से बाहर फेंक दिया।

जंगल में बड़े भाई को आधी रात तक होश नहीं आया। जब वह उठा, तो उसे सरदी-सी लगी। पास के कम्बल को अच्छी तरह ओढ़कर, उसने अपनी पत्नी को उठाया, वे जान गये कि उनकी सब चीज़ों को वह स्त्री चुरा ले गई थी।

"चोरी हो गई तो जाने दो। हम भला क्यों राजधानी की ओर निकले हैं। यह बिल्कुल बेमतलब की बात है। देखो, इस जंगल में कितना आनन्द आ रहा है! हम यहीं एक छोटी-सी झोंपड़ी बनाकर रहेंगे।" बड़े भाई ने अपनी पत्नी से कहा।

इस पर पत्नी ने कोई आपत्ति न की।

इसके अगले दिन ही, राजा ने अपने कर्मचारियों की एक सभा बुलवायी। उसमें छोटे भाई को भी निमन्त्रित किया, तबतक छोटा भाई जान गया था कि उसका कम्बल खो गया था, उसने उसे खोजने के लिए

नौकर से कहा। राजा के पास जाते ही, उसके परिवार को देखकर, ऐसा व्यवहार किया, जैसा कि उसने पहिले कभी न किया था। "मुझे ये क्यों बुला रहे हैं? मैंने कौन-सा अपराध किया है?" वह घबराने लगा।

राजा भी सोचने लगा—"मैंने इस मोची को अपने घर इतने दिन कैसे रखा? जब उसने यह बात दरबारियों से पूछी, तो वे एक दूसरे को दोष देने लगे। दरबार में दंगल-सा होने लगा। झगड़ते हुए लोगों को देखकर छोटे भाई की ओर देखकर पूछा—"तुम क्या तमाशा देख रहे हो? जाओ बाहर।"

छोटे भाई ने कुछ न कहा—"वह बाहर चला गया। उसे अपनी झोंपड़ी याद हो आई। वह उसकी ओर चल पड़ा। वह शाम तक चलता रहा, फिर उस जंगल में पहुँचा, जहाँ उसके भाई ने तभी तभी एक झोंपड़ी बनाई थी। उसे बड़ी भूख लग रही थी और उस झोंपड़ी में कोई रसोई कर रही थी। शायद वे उसे भी थोड़ा खाना दे दें, यह सोचकर उसने जब झोंपड़ी में पैर रखा, तो अपने

भाई को खुर्राटें मारते देखा और उसकी बगल में उसने अपना कम्बल भी देखा।

रसोई करती हुई बड़े भाई की पत्नी ने, उसके कीमती वस्त्र देखकर सोचा कि वह कोई राजकर्मचारी था। "वह दिन भर झोंपड़ी बनाता रहा, अब थक थकाकर सो रहा है। उठाओ मत। रसोई खतम हो रही है, होते ही उठा देंगे।"

छोटे भाई ने अपना कम्बल उठाकर अपने कन्धे पर डाल लिया। तुरत उसकी चिन्तायें जो उसे सता रही थीं, काफ़ूर हो गईं।

खाना बनवाया, बड़ा भाई उठा। छोटे भाई को देखकर, उसे पहिचानकर उसने पूछा—"हमने तो सुना था कि तुम राजा के यहाँ हो, क्या इधर शिकार खेलने आये हो?"

"नहीं भैय्या। हमारा राजा लोगों से क्या काम है? मैं अपनी पुरानी झोंपड़ी की ओर ही जा रहा हूँ। तुम क्यों हो इस जंगल में? चलो घर चलें। हम चप्पल बनायेंगे और आराम से रहेंगे।" छोटे भाई ने कहा।

"यह अच्छा ख्याल है। सवेरा होते ही चले चलेंगे।" बड़े भाई ने कहा।

उस दिन रात को सब ने भोजन किया, उसी झोंपड़ी में वे सोये। अगले दिन वे अपनी पुरानी झोंपड़ी में पहुँचे और वहाँ पहिले की तरह, मिलकर चप्पल बनाने लगे और जिन्दगी बसर करने लगे। यह सुन कि छोटा भाई बहुत दिन राजा के यहाँ अतिथि रहा था, लोग उसको बहुत आदर की दृष्टि से देखने लगे।

झूटी बहन

मणिपुर का राजकुमार महेन्द्र और मन्त्री का लड़का विजय मिलकर एक दिन जंगल में शिकार खेलने गये। शिकार में वे भटक गये। दोनों बहुत थक गये। वे बड़े प्यासे भी थे। उनको एक उजड़ा हुआ मन्दिर दिखाई दिया। अन्दर से किसी की आवाज़ सुनाई दी। जब उन्होंने दरवाज़ा खटखटाया तो अन्दर से एक स्त्री की आवाज़ सुनाई पड़ी...."कौन है?"

"मुझे प्यास लग रही है। थोड़ा पानी हमें दे दो, हम अपने रास्ते चले जायेंगे।" राजकुमार ने कहा।

दरवाजा खुला। अन्दर गन्दे कपड़ों में दो युवतियाँ दिखाई दीं। उन्होंने पानी, जंगल के फल और शहद लाकर, राजकुमार और मन्त्री के लड़के को लाकर दिया।

"मैं इस देश का राजकुमार हू। मेरा नाम महेन्द्र है। मेरा यह मित्र विजय है, यह मन्त्री का लड़का है। तुम्हें यहाँ देख, हमें आश्चर्य होता है।" राजकुमार ने कहा।

तुरत बड़ी युवती ने जवाब दिया।

"हम भी राजकुमारियाँ हैं। एक राक्षस स्त्री हमारे पिता को डराकर, हमें कहीं ले जा रही थी कि हम उसको चकमा देकर यहाँ आकर छुप गई। अगर हम कहीं गई भी तो वह राक्षसी हमें फिर पकड़ लेगी। हमारे पिता को उस राक्षसी से बड़ा डर है।" यह कहते कहते उसकी आँखों में तरी आ गई।

"आप किस देश की राजकुमारियाँ हैं? आपके पिता का नाम क्या है?"

स्वर्ण कुमारी

राजकुमार ने उन दोनों में से बड़ी से पूछा।

"वह मत पूछिये....बताना हमारे लिए अपमान है, हमारे पिताजी के लिए तो और भी अपमानजनक है।" बड़ी बहिन ने कहा।

उसका नाम कुसुमावती था और उसकी छोटी बहिन का नाम था कमलाक्षी। राजकुमार ने यह जान लिया। महेन्द्र कुसुमावती पर और विजय कमलाक्षी पर मुग्ध हो उठे। महेन्द्र ने उन दोनों बहिनों से कहा—"हम दोनों, आप दोनों से विवाह करने के लिए तैयार हैं। क्या आप हमारे साथ आने के लिए तैयार हैं?"

"हमारी रक्षा करने के लिए भगवान ने ही आपको भेजा होगा।" कुसुमावती ने कहा।

कमलाक्षी ने अपनी बहिन को अलग ले जाकर कहा—"क्यों यूँ झूट बोल रही हो?"

"तुम ठहरो भी। जब भाग्य हमें यूँ खोजता आया है, तो क्या हम उसे यूँहि ठुकरा देंगे?" कुसुमावती ने कहा।

"यदि हम इनके साथ चली गईं, तो माँ का क्या हाल होगा?" कमलाक्षी ने कहा।

"वह खुश होगी। जानती हो, हम उसके लिए कितने भारी पड़ रहे हैं। कई बार उसने सोचा है कि यदि हम भी घरवाली बन गईं, तो अच्छा रहेगा। चलो चलें।" बहिन ने कहा।

कमलाक्षी अपनी बड़ी बहिन के साथ चल दी।

सच कहा जाये तो ये बहिनें एक साधारण परिवार की थीं। उनके पिताने एक बड़े धनी से कर्ज लिया और वह

कर्ज चुका नहीं पाया। वह उनके पिता पर दबाव डालने लगा—"तुम अपनी लड़कियों का मेरे साथ विवाह कर दो।" इस बात से उनके पिता को इतना दुख हुआ कि वह मर गया। इसके बाद इनकी माता, उस धनी से डर गई। अपनी लड़कियों को लेकर वह इस उजड़े हुए मन्दिर में रहने लगी।

जब राजकुमार और मन्त्री के लड़के वहाँ आये तो वह पास के गाँव में भीख माँगने गई हुई थी। यह जरूरी था कि वह वापिस आकर अपनी लड़कियों के ठौर ठिकाने के बारे में जाने, इसलिए कमलाक्षीने अपनी साड़ी फाड़कर उसके टुकड़े टुकड़े कर रखे थे।

राजकुमार बड़ी बहिन को और मन्त्री का लड़का छोटी बहिन को, अपने घोड़ों पर पीछे बिठाकर राजधानी पहुँचे। कमलाक्षी अपनी साड़ी के टुकड़े रास्ते के पास के पेड़ों पर डालती गई।

चूँकि राजा और मन्त्री किसी और देश गये हुए थे, इसलिए वे दोनों उनके आने तक विवाह के लिए उनकी अनुमति नहीं पा सकते थे। इसलिए कुसुमावती के रहने का प्रबन्ध राजा के अन्तःपुर में किया गया और कमलाक्षी का मन्त्री के महल में।

अपनी लड़कियों के जाने के कुछ देर बाद ही, माँ भीख लेकर मन्दिर वापिस आयी। वह जान गई कि किसी कारणवश उसकी लड़कियाँ कहीं चली गई थीं, ताकि वह रास्ता जान सके, इसलिए वे डालती गईं, उनको देखती वह राजधानी पहुँच गई और राजमहल की ओर जाने लगी।

उसी समय कुसुमावती महल में से अपनी माँ को आता देख, वह घबरा गई। अगर यह पता लग गया कि वह उसकी

माँ थी, तो क्या राजकुमार उससे शादी करेगा? यह सोचकर उसने अपनी दासी को बुलाया—"अगर वह भिखारिन अन्दर आने की कोशिश करे तो उसे दूर भगा देना।" दासी ने वैसा ही किया।

पास के मकान में ही कमलाक्षी थी। वह अपनी माँ की इन्तज़ार कर रही थी। उसने अपनी माँ को देखकर, अपनी दासी से कहा—"वह जो स्त्री खड़ी है, उनको सम्मान के साथ अन्दर ले आओ।"

माँ के आते ही, कमलाक्षी ने उसको अच्छा भोजन दिया। उसे अच्छे कपड़े दिये और जो कुछ हुआ था, उसे बताया। कमलाक्षी ने फिर उसको अपने ही कमरे में खाट पर सुला दिया।

कुछ देर बाद विजय, कमलाक्षी के कमरे में आया। यह कहकर कि जल्दी ही, राजा वापिस आ रहे थे और उनकी शीघ्र शादी हो जायेगी वह चला गया।

उसने उसकी माँ के बारे में न पूछा।

माँ के उठ जाने बाद कमलाक्षी ने उससे कहा—"माँ, बहिन ने झूट बोलकर अच्छी आफत मोल ले ली है। मैं मन्त्री के लड़के से सच कह दूँगी। उसके बाद हम दोनों अपने रास्ते चली चलेंगी।"

"नहीं, नहीं, बहिनने अच्छी ही चाल चली है। मेरा क्या रखा है? मैं तो यही चाहती हूँ कि तुम दोनों आराम से रहो। मैं जहाँ हूँ, वहाँ भली हूँ।" माँ ने कहा।

राजा और मन्त्री वापिस आ गये। जब उनके लड़कों ने कहा कि उन्होंने शादी के लिए अपनी पसन्द की लड़कियाँ चुन ली थीं, तो उन्होंने कोई आपत्ति न की। परन्तु एक बात हुई। जब यह बताया गया कि वे राजकुमारियाँ थीं, तो राजा ने कहा कि अच्छा होगा कि यदि

उनके माँ बाप उनकी शादियाँ करवायें। उनका नाम और देश के बारे में पता देने से उनका कोई अपमान न होगा। कुसुमावती से राज्य का नाम वगैरह पूछा गया।

कुसुमावती घबरा गई। उसने कहा—"हम मरकत देश की हैं और हमारे पिता जी का नाम श्रीपाद है।" जो उसकी जबान पर आया, उसने वह कह दिया। अगले दिन ही राजा ने कुसुमावती और कमलाक्षी को मरकत देश भेजने की तैय्यारियाँ करवाईं।

कमलाक्षी अपनी बहिन के पास गई "हमें इस आफ़त से कैसे बचाओगी?"

"अब सिवाय जहर पी लेने के मुझे कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है।" कुसुमावती ने दुखी होकर कहा।

"खूब बात बताई! हमने विष खा लिया, तो हमारी समस्या तो खतम हो जायेगी। पर माँ का क्या होगा?" कहती कमलाक्षी अपने कमरे में चली गई।

उस दिन शाम को विजय ने उसके पास आकर कहा—"मरकत देश जाने के लिए तैय्यारियाँ पूरी हो गई हैं। क्या तुम तैयार हो?"

"न मरकता देश है, न मेरा सिर है। मैं जंगल में उस उजड़े मन्दिर में चली जाऊँगी, जो कुछ हुआ है, उसे भूल जाइये।" कमलाक्षी ने कहा। उसने मन्त्री के लड़के से यह भी कह दिया कि उसकी बहिन ने क्या क्या झूट बोले थे।

विजय ने सब सुनकर कहा—"मैं सब जानता हूँ। जब तुम्हारी बहिन राजकुमार से झूट बोल रही थी, तब मैं तुम्हारे मुँह की ओर ही देख रहा था। तुम्हें झूट सुनकर बड़ा रंज हुआ था। फिर तुम्हारे कमरे में तुम्हारी माँ को देखकर, मैं जान

गया था कि तुम दोनों की शक्ल उससे मिलती जुलती थी। तुम झूट नहीं कह सकती। तुम्हारी बहिन झूट तो बोल लेती है, पर सुननेवालों को उस पर विश्वास नहीं होता। हज़ार डेढ़ हज़ार योजनों तक कहीं कोई मरकत देश नहीं है। न कोई श्रीपाद राजा ही है। राजकुमार नादान है। तुम्हारी बहिन का उसने विश्वास कर लिया, जब तक मैंने उसे सच न बताया, उसे विश्वास नहीं हुआ।" उसने हँसते हुए कहा।

कमलाक्षी ने एक लम्बी साँस ली। "अब मैं अपने को हल्का अनुभव कर रही हूँ। कृपा करके क्या हम दोनों को हमारे उजड़े मन्दिर में छोड़ आयेंगे? पैदल हम जा सकती हैं, पर डर है कि हम कहीं भटक न जायें।"

"मैंने तो तुम्हें देखते ही निश्चय कर लिया था कि तुमसे विवाह करूँगा और मैं विवाह करके रहूँगा। यह पता लगते ही कि तुम्हारी बहिन राजकुमारी नहीं है, इसलिये उससे शादी नहीं करने देंगे। इसी फ़िक्र में राजकुमार बीमार हो गया है, उसकी हालत देखकर राजा भी उसके विवाह के लिए मान जायेंगे। मुहूर्त निश्चित कर दिया गया है। हम तुम्हारी माँ को बुलवा रहे हैं।" विजय ने कहा।

जैसा उसने कहा था कि झूट न बोल सकनेवाली उसकी बहिन का और झूट न बोलनेवाली बहिन का, राजकुमार और मन्त्री के लड़के से विवाह हो गया। उनकी माँ भी उनके साथ थी। सब सुख से रहने लगे।

आयुधागार के सैनिकों ने जब आकर कंस को बताया कि उसका धनुष तोड़ दिया गया था, तो उसे लगा जैसे उसकी रीढ़ ही तोड़ दी गई हो। वह बड़ा दुखी हुआ और उसी दुःख में उत्सव के लिए की गई व्यवस्था देखने गया।

एक सुन्दर रंगस्थल बनाया गया था। राजा, मन्त्री और अभ्यागत राजा और राजबन्धु, भृत्य और नागरिकों के लिए अलग अलग मंच बनाये गये थे और उनके लिए सीढ़ियाँ भी तैयार की गई थीं। सब जगह सुन्दर परदे और तोरण आदि लगाये गये थे। अगर और धूप बत्तियाँ रखी हुई थीं? तरह तरह के अलंकरण किये गये थे। यह सब देखकर नौकरों को आवश्यक काम बताकर, कंस अपने अन्तःपुर में वापिस आ गया।

चाणूर, मुष्टिक मल्लों को बुलाकर उसने कहा—"संसार में तुम्हारे सरीखे मल्ल नहीं हैं। बलराम और कृष्ण ये दोनों छोकरे अब तक जंगलों में घूमते रहे हैं। उनमें न धैर्य्य है, न साहस है, न शौर्य है। जब वे तुम से भिड़ें, तो उनसे ज्यादह देर तक न लड़ना, अगर एक ही चोट में तुमने उनको मार दिया, तो मेरा बड़ा भला होगा।"

११. कंस वध

पल पलाकर अब ग्वाले से हो गये हैं, वे बड़े बुरे हैं और बड़े बलवान हैं। वे यहाँ आये हुए हैं। तुम पहिले ही कुवलय पीड़ को राजमहल के द्वार के पास ले जाओ। उनके आते ही, उसको उन पर उकसाओ। कुवलयपीड़ उनको देखते देखते कुचल देगा।

अगले दिन प्रात:काल राजाज्ञा के अनुसार रंगस्थल में सब अपनी अपनी जगह बैठ गये और बलराम और कृष्ण की प्रतीक्षा करने लगे। कंस एक ऊँचे सिंहासन पर बैठा था। उसने सफेद कपड़े पहिन रखे थे, उसने मोती आदि के गहने भी लगा रखे थे। सफेद छत्र के नीचे वह चन्द्रमा-सा लगता था।

राजा ने जब इस प्रकार कहा, तो मल्ल बड़े खुश हुए। "इतना कहने की क्या ज़रूरत है महाराज! ये ग्वाले हमारे हाथ में आये कि नहीं, हम उनका चूरा चूरा करके रख देंगे। क्या आप हमारे बारे में नहीं जानते? यह भी कोई हमारे लिए बड़ा काम है?" शेखियाँ मारकर वे अपने घर चले गये।

फिर कंस ने महामात्र नाम के महावत को बुलाकर कहा—"तुम मेरे बड़े विश्वासपात्र हो। मुझे तुमसे बड़ा ज़रूरी काम है। वसुदेव के लड़के गाँवों में

चाणूर और मुष्टिक उन्मत्त हाथियों की तरह रंगस्थल में, कंस के समक्ष खड़े थे। महामात्र कुवलयपीड़ पर सवार होकर द्वार के पास आया और बलराम और कृष्ण की इन्तज़ार करने लगा।

थोड़ी देर बाद बलराम और कृष्ण द्वार के पास आये। सब ने उनको बड़े आश्चर्य से देखा। वे बड़े निश्चिन्त और निर्लिप्त से लगे। उनके द्वार पर दिखाई

देते ही, वाद्यों के शोर और प्रेक्षकों के करतल ध्वनि से आकाश गूँज उठा। उस कोलाहल में महामात्र ने, कुवलयपीड़ को उनकी ओर दौड़ाया।

यह देख कृष्ण ने बलराम की ओर देखते हुए कहा—"कंस ने हमको मारने के लिए एक हाथी को तैयार रख रखा है, पर वह यह नहीं जानता कि वह मृत्यु के चुँगल में है। तुम जरा मुझे देखते रहना।" यह कह वह आगे बढ़ा। बड़े दान्त, भयंकर सूंड उठाकर, वह बड़े बड़े कदम इस तरह रख रहा था कि भूमि भी मानों काँप रही थी, वह कृष्ण की ओर लपका।

कृष्ण ने उसके साथ लड़कर अपना बल दिखाने की ठानी। उसके साथ उसने कुछ समय तक मनोरंजन भी करना चाहा। उसने पहिले अपनी सूंड़ से अपने को मारने दिया। फिर उछलकर, उसके दान्तों पर खड़े होकर, बायें पैर से उसके कुम्भस्थल पर जोर से मारा। उसकी पीठ पर सवार हो गया और उसकी सूंड़ पकड़कर वह नीचे कूदा और मुट्ठी से उसके पेट में घूँसा मारा। जब हाथी पीछे मुड़ा, उसके पैरों के बीच में से वह निकल गया और उसकी पूँछ पकड़कर उसे घुमाने लगा। हाथी नीचे गिर पड़ा। फिर उठा और बड़े जोर से उसने अपनी सूंड़ कृष्ण पर मारी। उसे दान्तों से मारा। अब कृष्ण ने उसे मारने का निश्चय किया। वह उछला। उसने उसके मुख पर लात मारी। उसका एक दान्त उखाड़ दिया और उसी से, हाथी के सिर पर जोर जोर से मारने लगा। जल्दी ही कुवलयपीड़ ज़मीन पर गिर पड़ा और प्राण छोड़ने लगा। उसके साथ गिरे हुए

महावत का सिर भी, कृष्ण ने हाथी के दान्त से तोड़ दिया। कृष्ण ने उसे भी मार दिया।

हाथी ने जो घाव कृष्ण पर लगाये थे, उनमें से खून बह रहा था। हाथ में उसने हाथी का दान्त पकड़ रखा था, इस प्रकार उसकी आकृति भयंकर हो गई थी। उसे देख कंस ने अत्यन्त क्रोध में, चाणूर की ओर देखा और उसे ईशारा किया कि वह उससे मल्लयुद्ध करे। उसी तरह मुष्टिक, बलराम से युद्ध करने लगा।

चाणूर और मुष्टिक को यह गर्व था कि उनसे बढ़कर कोई बलवान संसार में न था। चाणूर ने कृष्ण के पास जाकर परिहास करते हुए कहा—"गौवों को चराते और ग्वालों के बच्चों को सताते, तुमने बहुत ख्याति पाई है, आज तुम मेरे हाथ आये हो। नहीं छूट सकते। मैं तुम्हें अभी यम के पास इस तरह भेजूँगा कि ये महाराजा और ये महाजन प्रसन्न होंगे।" कृष्ण ने चाणूर से कहा।

"कंस ने तुमसे बड़ी आशायें लगा रखी हैं। इसलिए तुम अपना सारा बल दिखाओ। फाल्तू बकवास न करो।" उसने मल्ल को छेड़ा।

चाणूर कृष्ण से जा भिड़ा। सभा में उपस्थित यादव, कृष्ण को देख घबराये। "पहाड़ से चाणूर और बच्चे से कृष्ण के साथ मल्लयुद्ध....? यह भी क्या अन्याय है? क्या यहाँ के लोगों को बिल्कुल तमीज नहीं है? यही नहीं, मल्लयुद्ध करने का तरीका भी यह नहीं है। मल्लयुद्ध करनेवालों के साथ सहायक होने चाहिये? जब वे थक थका जायें, तो उनकी शुश्रुषा की जानी चाहिये। हुनर एक बात है

और बल दूसरी। ज़रूरत पड़ने पर युद्ध रोक भी देना चाहिये। यह विनोद है। न कि दो विरोधियों में युद्ध? जो हुआ सो हुआ। राजा को अब दोनों का सत्कार करके, युद्ध समाप्त कर देना चाहिये।" यादव मन ही मन सोचने लगे।

यह सुनकर कृष्ण ने उनसे कहा—"मुझे इस तरह ही लड़ने दीजिये। मनोबल, पराक्रम, धैर्य, उत्साह, भय यही दिखाना, जब उद्देश्य हो, तो उसका लम्बाई चौड़ाई और उम्र से क्या सम्बन्ध है? मैं इसे मार डाल देना चाहता हूँ। इसलिए तुम इधर उधर की बातें न करो और देखते रहो। यह चाणूर करुष देश का है। इसने कई मल्लों का खातमा किया है, मैं इसे मारकर कीर्ति पाऊँगा।" कहकर उसने चाणूर से मल्लयुद्ध प्रारम्भ किया।

उस युद्ध में चतुर चाणूर से भी अधिक हुनर कृष्ण ने दिखाया। एक दूसरे से बचते, धकेलते, झुकते, उछलते, फाँदते, सरकते, उन्होंने बड़ी खूबी से युद्ध किया। जब उनकी पीठ से पीठ मिलती, या सिर से सिर टकराता, तो तालियाँ बजतीं। एक दूसरे को उन्होंने हाथों से, पैरों से मारा। दान्तों और नाखूनों से खरोंचा। वे यूँ लड़ते जाते थे और देखनेवालों का भय बढ़ता जाता था।

सब तरह के पैतरों में कृष्ण का हाथ ही ऊपर रहा। प्रेक्षकों ने जब तालियाँ बजाईं, तो कंस ने क्रुद्ध होकर "बन्द करो" का संकेत किया। कृष्ण ने थोड़ी देर तक अपना चातुर्य दिखाकर चाणूर को खतम करने का निश्चय किया। चाणूर का काम भी करीब करीब हो गया था। यूँ कमजोर होते मल्ल की ओर कृष्ण लपका, उसे पकड़कर उसके माथे पर मुट्ठी

से मारा। फिर उछलकर उसने अपने घुटने उसकी छाती पर मारे। इस चोट के कारण चाणूर के होश जाते रहे और वह खून उगलता नीचे गिर पड़ा और मर गया।

कृष्ण के चाणूर के मारते ही, बलराम ने भी मुष्टिक का काम तमाम कर दिया, दोनों मल्लों को मारकर, बलराम और कृष्ण विजयी होकर, रंगस्थल में खड़े हो गये। उन्होंने जिस नज़र से कंस को देखा और कंस के मुँह पर व्यक्त क्रूरता को देख नन्द गोप आदि गोपक भय से इस तरह काँप गये कि उनके मुख से बात तक न निकली।

देवकी, जो तब तक इस शोक में थी कि न मालूम उसके लड़के की चाणूर के हाथों में क्या गति हो, कहीं मर मरा न जाये, जब उसको विजयकर्म के साथ खड़े हुए पाया, तो उसकी आँखों से आनन्दाश्रु निकलने लगे। वसुदेव के आनन्द की भी सीमा न थी।

कंस पसीना पसीना हो रहा था। क्रोध के कारण सारा शरीर काँप रहा था। लम्बी लम्बी साँसें ले रहा था। आँखों से मानों अंगारे निकल रहे थे ! उसने चारों ओर देखा और अपने नौकरों को बुलाकर कहा—"इन दोनों ग्वाले लड़कों को नगर के बाहर छोड़ आओ। नन्द गोप को जंजीरों से बाँध दो। बाकी सब गोपकों के सिर कटवा दो। मेरे राज्य में जहाँ कहीं कोई ग्वाला दिखाई दे, तो उसे इस तरह सजा दो, जैसे वह कोई चोर हो। ग्वालों की सम्पत्ति ले लो, कुटिल वसुदेव को क्रूर दण्ड दो।"

यह सुन, जो जहाँ खड़ा था, वह वहाँ पथरा-सा गया। देवकी को इतना दुःख
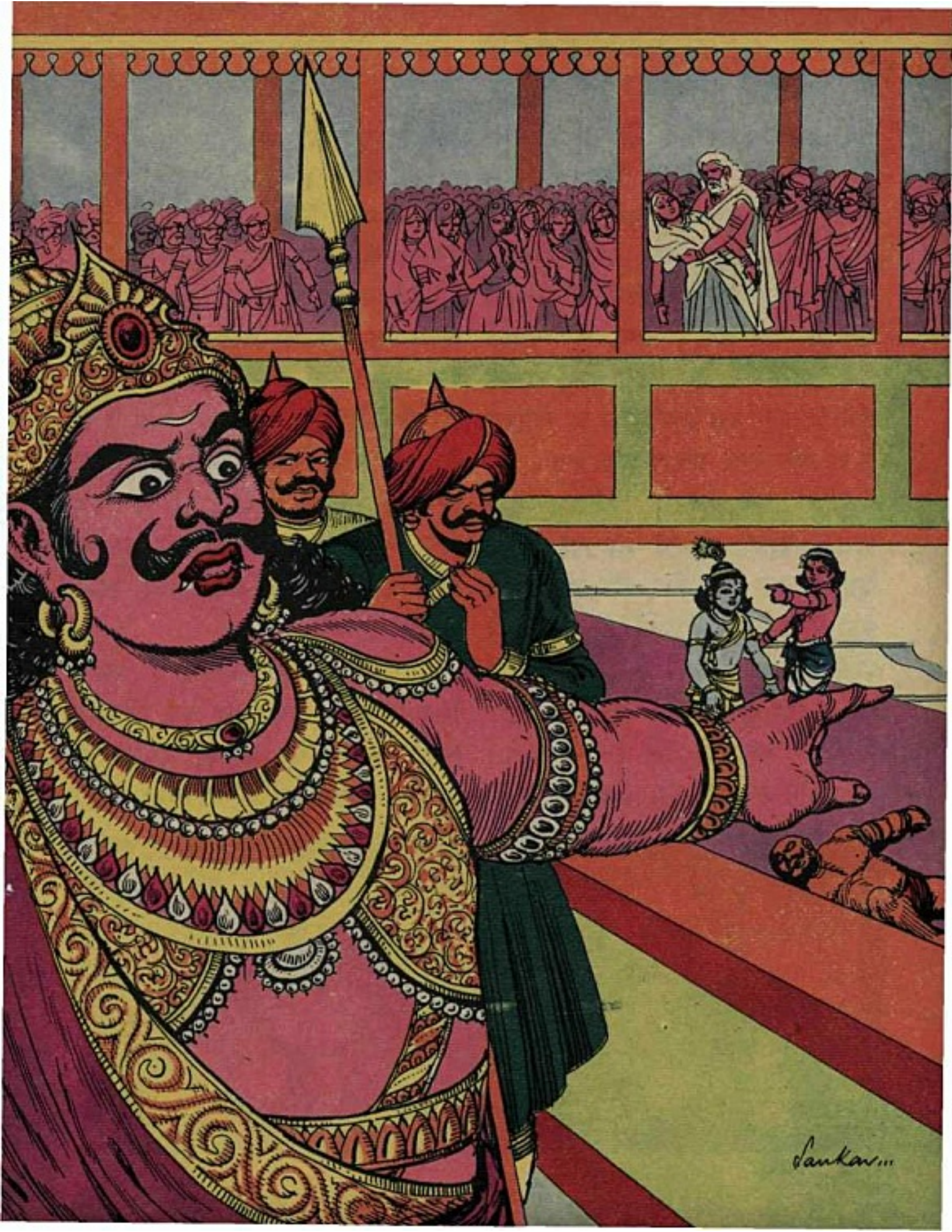
हुआ कि वह मूर्छित हो गई। कृष्ण को अपने माँ बाप की विवशता, बन्धु मित्रों का कष्ट और सभा में उपस्थित लोगों को निस्सहाय देख, कृष्ण क्रुद्ध हो उठा। वे तेज़ी से सीढ़ियों पर चढ़कर कंस के पास गया। सभा में उपस्थित लोगों को उसका इस प्रकार जाना दिखाई नहीं दिया। एक क्षण पहिले वह रंगस्थल में था और दूसरे क्षण कंस के पास।

फिर उसने कंस के किरीट पर लात मारी। उसकी मोतियाँ झड़ गईं, उसने कंस के बाल पकड़ लिए और उसका सिर मुट्ठी में ले लिया। घुटनों से वह उसकी छाती पर मारने लगा। कंस कुछ भी नहीं कर पा रहा था। उसके गले के हार टूट गये थे। कानों में रखे फूल गिर गये। कपड़े ढ़ीले हो गये। नाक और कानों से मुख से, खून बहने लगा। आँखें बाहर-सी आ गई थीं। कृष्ण ने कंस को, सीढ़ियों के नीचे धकेल दिया। वह ठंडा हो गया, रंगस्थल के द्वार के पास जा पड़ा।

इसी समय बलराम ने कंस के भाई सुनाम पर शेर की तरह लपककर, उसे मार दिया।

कृष्ण ने खून से लथपथ उन्हीं हाथों से, वसुदेव के चरण छुये। वसुदेव ने कृष्ण का आलिंगन करके, उसको आशीर्वाद दिया। फिर कृष्ण ने देवकी को नमस्कार किया। उसने उसको गले लगाकर, उसके सिर को सूँघा।

फिर कृष्ण ने उग्रसेन आदि को प्रणाम किया। उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। सबको जाने के लिए कहकर, बलराम के साथ वह अपने पिता के घर चला गया।

अरण्य पुराण

[१४]

बलदेव जमीन पर पड़ा, खाँसता कराह रहा था। सब उस पर प्रश्नों की बौछार कर रहे थे। पेड़ पर चढ़ने के कारण उसके हाथों और पैरों पर खरोंच आ गई थी। मुख से ठीक तरह बात भी नहीं निकल रही थी। वह ईशारों से भूतों के बारे में, जादू के बारे में इधर उधर की बातें कर रहा था।

मौवली ने सोचा कि जब तक लोग बलदेव की कहानी सुन रहे हैं, तब तक मेस्सुआ पर पहरा देने की उन्हें न सूझेगी। फिर वह झोंपड़ी के पास आया। जब वह खिड़की के पास पहुँचा, तो उसे लगा कि उसका पैर कोई चाट रहा था।

"तुम हो माँ ! यहाँ क्या कर रही हो ?" उसने पूछा।

"बच्चों का जंगल में गाना सुनाई दिया और मैं चली आयी। खैर जिस स्त्रीने तुम्हें दूध दिया था, मैं उसे देखना चाहती हूँ।" भेड़िया माँ ने कहा।

"उसे बाँध बूँध कर ये मार देना चाहते थे। मैंने उसके बन्धन खोल दिये हैं। वह और उसका पति जंगल के रास्ते चले जायेंगे। मौवली ने कहा।

"खैर, मैं साथ आऊँगी। उम्र हो गई है, पर अभी तक दान्त नहीं उखड़े हैं।" कहती भेड़िया खड़ी होकर अन्दर अन्धेरे में देखने लगी।

मौवली फिर खिड़की में से अन्दर गया—"इस समय सब बलदेव को घेरे हुए हैं, उसकी कहानी सुनने के बाद,

वे आग लायेंगे और तुम्हें जला देंगे। और उसके बाद?"

"मैंने अपने पति से बातचीत कर ली है। खान्हीवारा यहाँ से तीस मील दूर है। वहाँ हमें अंग्रेज़ मिल सकते हैं।" मेस्सुआ ने कहा।

"वे किस जाति के हैं?" मौवली ने पूछा।

"मुझे नहीं मालूम। उनका सारे देश पर शासन है। अगर हम रात को पहुँच गये तो जी जायेंगे, नहीं तो मर जायेंगे।" मेस्सुआ ने कहा।

"तो जाओ। आज रात को कोई आदमी ग्राम के द्वार से नहीं निकल सकेगा।" मौवली ने कहा।

मेस्सुवा का पति घुटनों के बल बैठा, झोंपड़ी के एक कोने में कुछ खोद रहा था।

"अरे, यह गड़ा पैसा हम साथ न ले जा सकेंगे।" मेस्सुआ ने कहा।

मेस्सुवा के पति ने मौवली की ओर देखकर कहा—"इस पैसे से एक घोड़ा खरीदा जा सकता है। एक और घंटे में गाँववाले हमारा पीछा करने लगेंगे।"

"जब तक मैं उन्हें छोड़ नहीं देता, मैं कहता हूँ वे तुम्हारे पीछे नहीं पड़ेंगे। फिर भी घोड़े की बात अच्छी है।" मौवली ने कहा।

मेस्सुआ का पति सब रुपयों को लेकर उठा और उसने रुपयों को ऐंटी में लपेट लिया। मौवली ने मेस्सुआ को पकड़कर खिड़की में से बाहर निकाला। बाहर ठंडी हवा में उसकी जान में जान आई।

"खान्हीवारा का रास्ता जानते हो?" मौवली ने पूछा। उन्होंने सिर हिलाकर बताया कि वे जानते थे।

"शाबाश, अब तुम्हें कोई डर नहीं है, जाओ। मज़े में जाओ। परन्तु तुम्हारे आगे पीछे, तुम्हें कुछ संगीत सुनाई पड़ेगा।" मौवली ने कहा।

"अगर हमें यह डर नहीं होता कि वे हमें जला नहीं देंगे, तो क्या हम इस आधी रात के समय पैर बाहर रखते? मनुष्यों के हाथ मरने से भला यही है कि हम क्रूर पशुओं द्वारा मार दिये जायें।" मेस्सुआ के पति ने कहा।

"मैं कह जो रहा हूँ, जंगल में तुम्हें किसी प्रकार की हानि न होगी। जब तक खान्हिवारा तक न पहुँच जाओगे तुम्हारी रक्षा की जायेगी....न आदमी का डर होगा, न पशु का ही। बेफिक्र चले जाओ।" मौवली ने कहा।

मेस्सुआ मौवली के पैरों पड़ी। मौवली का शरीर पुलकित हो उठा। उसने उसे उठाया। मेस्सुआ ने उसे गले लगाया और उसे दुआ दी।

उसके पति ने अपने खेतों की ओर देखा। "यदि हमने खान्हीवारा जाकर, अंग्रेज़ों से बात की और ब्राह्मण और बलदेव पर मुकदमा करने की ठानी तो

सारे गाँव का दिवाला निकल जायेगा। मेरी फसल से और भूखे भैसों से मुझे दुगनी आय नहीं आयेगी? मुझे अच्छा इन्साफ मिलेगा?"

मौवली ने हँसकर कहा—"इन्साफ़ किसे कहते हैं, यह तो मैं नहीं जानता, अगली सरदी में आकर यहाँ देखना कि यहाँ क्या बचता है।"

वे जंगल की ओर चल दिये। मेड़िया माँ आगे कूदी।

"इनके साथ जाओ। सारे जंगल में बता दो कि इन पर कोई आफ़त न आये,

ज़रूरत हो, तो चिल्लाओ। बघेल को भी बुलाओ।" मौवली ने भेड़िया माँ से कहा।

एक लम्बा चीत्कार क्रम से बढ़ा और फिर कम हो गया। मेस्सुआ का पति चौंका। उसने घर की ओर भागना चाहा।

"चलो चलो....कहा तो था कि थोड़ा-सा संगीत साथ रहेगा। खान्हीवारा तक संगीत सुनाई पड़ता रहेगा। इसका मतलब है कि जंगल में तुम्हें कोई डर नहीं है।" मौवली ने कहा।

मेस्सुआ ने उकसाकर अपने पति को आगे चलाया। उनके साथ भेड़िया माँ भी जंगल में अदृश्य हो गई। उसी समय बघेल मौवली के पैरों के पास आया।

"चारों भाई कहाँ हैं? आज रात किसी को भी गाँव से बाहर न जाने दो।" मौवली ने कहा।

"क्या मैं अकेला इस काम के लिए काफ़ी नहीं हूँ।" बघेल ने पूछा।

"और उस पेड़ के नीचे बातें चलती जाती हैं। बलदेव ने बहुत-सी कहानियाँ सुना दी होंगी। वे झोंपड़ी के पास आकर उस पति पत्नी को जलाने के लिए बड़े उतावले हो रहे हैं। जब वे आयेंगे, तो क्या पायेंगे। खाली झोंपड़ी बस....हा हा...." मौवली जोर से हंसा।

"जब वे आयें तो मुझे यहाँ रहने दो न? मुझे देखकर कोई झोंपड़े के पास नहीं आयेगा। वे मुझे रस्सियों से नहीं बाँध सकते।" कहता बघेल झोंपड़े में घुस गया। बघेल खाट पर लेट गया, उसने मौवली को भी साथ बैठने के लिए कहा। पर मौवली नहीं चाहता था कि कोई आदमी उसे देखे। (अभी है)

६८. विक्टोरिया जलप्रपात

"मुसि-ओअ-तुन्य" (धुआँ भी बोलता है) इस नामवाला जलप्रपात रोडेशिया (अफ्रीका) में है। इसकी लम्बाई एक मील, ऊँचाई २५६ से ३४३ फीट है।

Photo by Prabhakar Mahadik
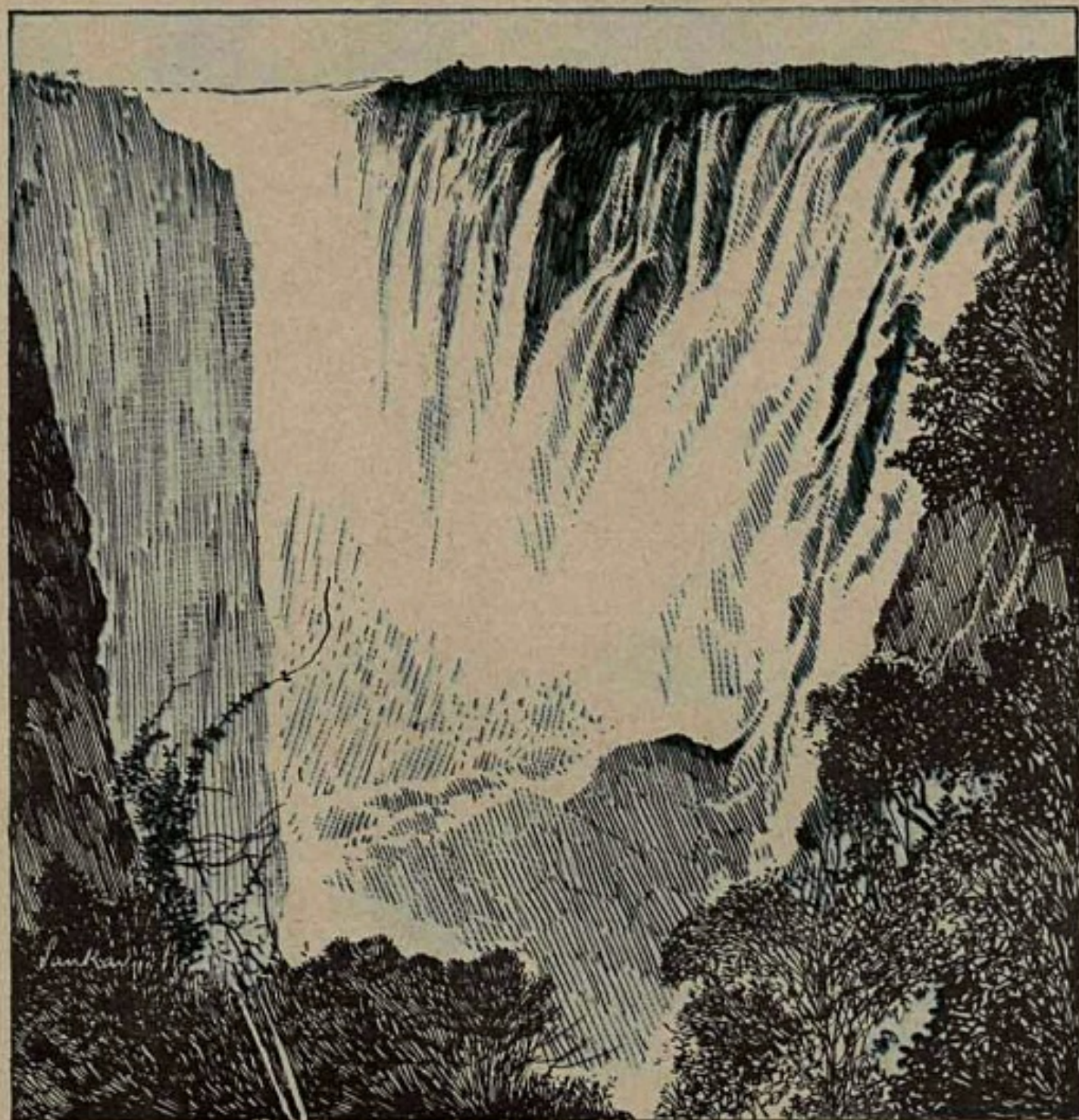
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

चार आँखें हैं बेकरार!

प्रेषक:
व्ही. आर. कर्णे - पूना

Photo by T. S. Satyan
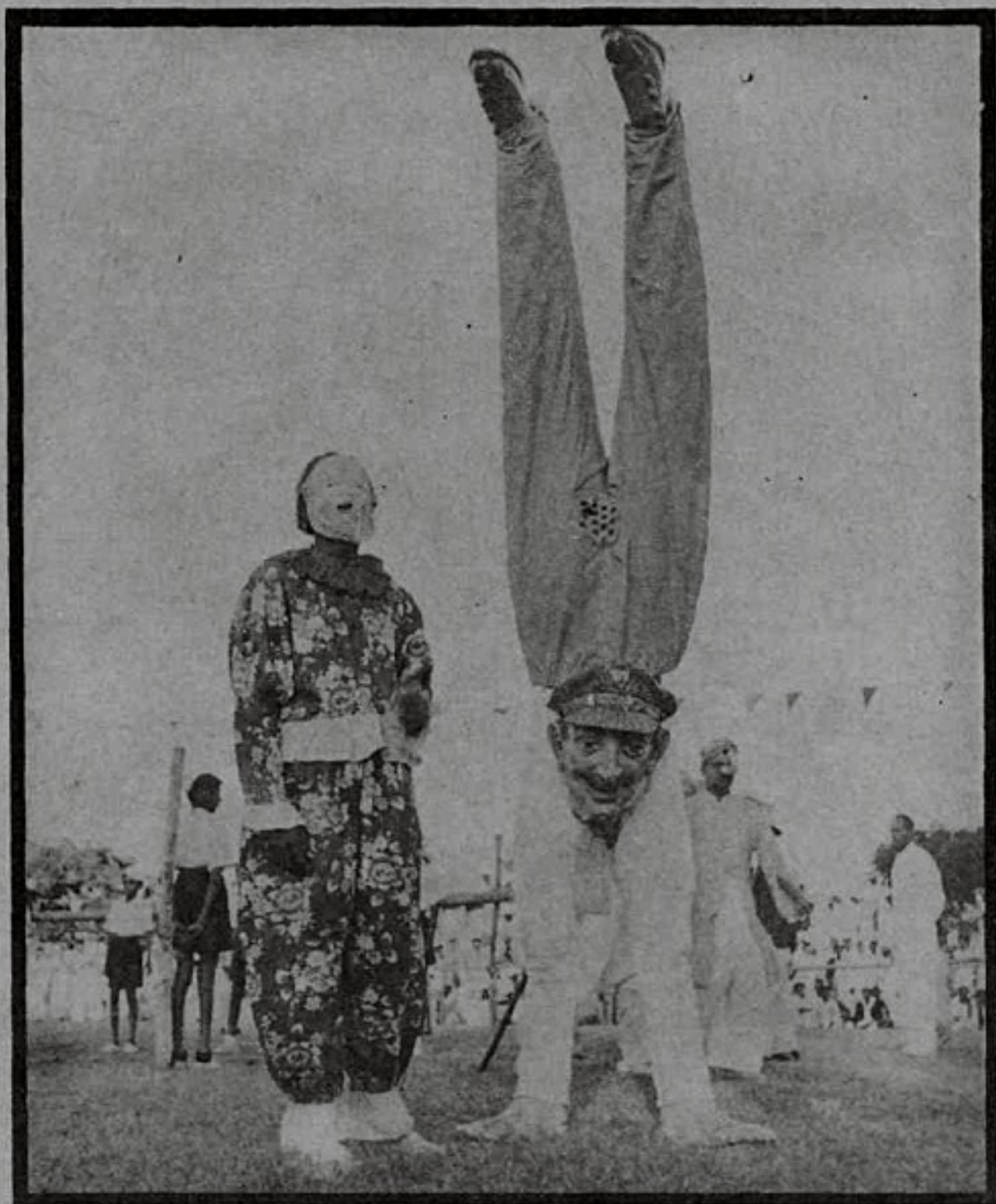
पुरस्कृत परिचयोक्ति

जब दो टाँगें हैं सिर पर सवार !!

प्रेषक : व्ही. आर. कर्ण - पूना

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अक्तूबर १९६७ :: पारितोषिक १०)
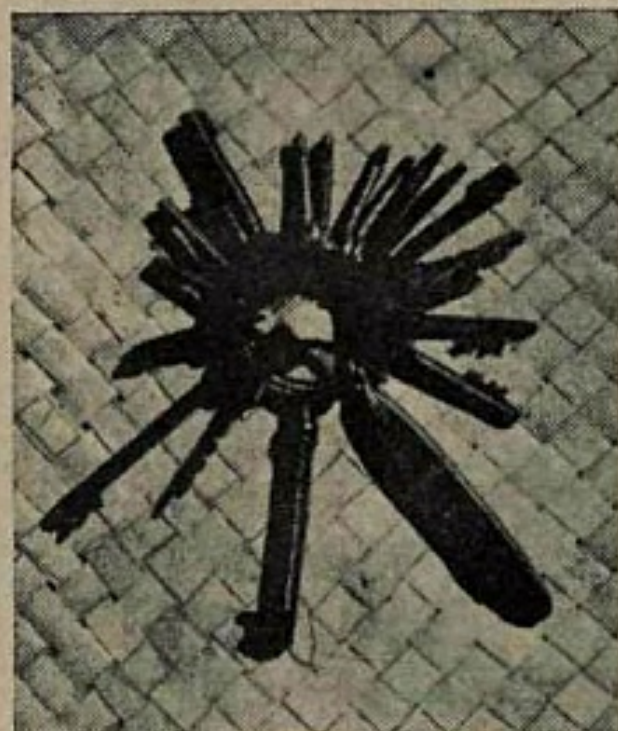
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ अगस्त १९६७ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

अगस्त – प्रतियोगिता – फल

अगस्त के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।

इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **चार आँखें हैं बेकरार!**

दूसरा फ़ोटो: **जब दो टाँगें हैं सिर पर सवार!!**

प्रेषक: **श्री व्ही. आर. कर्णे,**

२१७, रास्तापेठ, पूना - १

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'